ग्रामीण विकास
को समर्पित

कुरुक्षेत्र

वार्षिक मूल्य : 100 रुपये

वर्ष 54 अंक : 9 | जुलाई 2008 | मूल्य : 10 रुपये

हरित क्रांति

सत्यमेव जयते
उपभोक्ता मामले, खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय
उपभोक्ता मामले विभाग, भारत सरकार
Website:www.fcamin.nic.in
जागो ग्राहक जागो
सयानी रानी की ज़बानी....
गुणवत्ता के साथ समझौता न करें, ISI मार्क वाली वस्तुऐं खरीदें।
ISI
उपभोक्ता राष्ट्रीय हेल्पलाइन नंबर
1800–11–4000 (नि:शुल्क) पर सम्पर्क कर सकते हैं।
(बीएसएनएल/एमटीएनएल लाइनों से)
अथवा 011–27662955,56,57,58 (सामान्य कॉल दरें)

KH-07/08/02

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 54 ★ मासिक अंक ★ पृष्ठ : 48

आषाढ़–श्रावण 1930, जुलाई 2008

सम्पादक
कैलाश चन्द मीना

संपादकीय पत्र–व्यवहार
संपादक, कुरुक्षेत्र
कमरा नं. 655, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110011
दूरभाष : 23061014, 23061952
फैक्स : 011–23061014, तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
एन.सी. मजुमदार

व्यापार प्रबंधक
जगदीश प्रसाद
दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516
ई–मेल : pdjucir_jcm@yahoo.co.in

आवरण एवं सज्जा
संजीव सिंह और रजनी दवे

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

कुरुक्षेत्र

इस अंक में

★ कृषि में हरित क्रान्ति का ताना–बाना	डॉ. सुधीश कुमार पटेल	4
★ भारत–दूसरी हरित क्रांति की ओर	अभिनय कुमार शर्मा	8
★ दुष्प्रभावों के कारण वरदान से अभिशाप बनी हरित क्रान्ति	डॉ. अरविन्द सिंह	11
★ हरित क्रांति में भुखमरी	भरत कुमार दुबे	15
★ नई कृषि तकनीक और हरित–क्रान्ति	अखिलेश आर्येन्दु	18
★ विश्वव्यापी खाद्यान्न संकट	डॉ. ओ.पी. शर्मा	22
★ भारतीय कृषि का विश्लेषणात्मक विवेचन	प्रोफेसर सी.एम. चौधरी	26
★ बढ़ती जनसंख्या – एक समस्या	डॉ. अंजली जायसवाल	29
★ ग्रामीण विकास में नाबार्ड की भूमिका	डॉ. के. एम. मोदी	33
★ सूचना की साझेदारी के दस साल	आर. अनुराधा	35
★ ब्रोकली उत्पादन की आधुनिक तकनीक	डॉ. मदन पाल	39
★ कुपोषण : कारण और बचाव	डॉ. जसवीर सिंह एवं डॉ. तेजपाल सिंह	44
★ सफलता की कहानी	वीरेन्द्र परिहार	47

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

संपादकीय

हमारा देश प्राचीन काल से ही कृषि प्रधान देश रहा है। उस समय लोगों का मुख्य पेशा पशुपालन था तथा पेट भरने लायक खेती कर लेते थे। जैसे–जैसे जनसंख्या बढ़ी, लोगों ने आवश्यकतानुसार बंजर भूमि को समतल करके खेती के योग्य बनाया। जहां सिंचाई के लिए पानी व उपजाऊ भूमि थी वहां पर लोग बस गए और खेती करने लगे। इन लोगों के पास पशुधन इतना था कि किसानों को कृषि के लिए पर्याप्त खाद मिल जाती थी।

अब तेजी से बढ़ती आबादी और घटती खेती की जमीन से पैदावार कम पड़ने लगी तो संकर बीज, सिंचाई के बेहतर प्रबंध, उन्नत तकनीक और रासायनिक खादों का इस्तेमाल करके अधिक पैदावार लेने की होड़ शुरू हुई जो 1965–66 में आई हरित क्रांति की देन है। आजादी के समय हमारा खाद्यान्न उत्पादन 50 मिलियन टन था जो हरित क्रांति के उपरांत 1978 में 130 मिलियन टन से बढ़कर आज 220 मिलियन टन हो गया है पर चिंता का विषय यह है कि इसके बावजूद भी भारतीय राष्ट्रीय आय में कृषि का हिस्सा घटता जा रहा है। हरित क्रांति के कारण हमारे यहां तिलहन का उत्पादन घटा है।

दो गुनी पैदावार बढ़ाने के लिए अधिक रासायनिक खादों के प्रयोग से जहां भूमि की लवणता में वृद्धि हुई है वहीं ऐसे जीवाणुओं की वृद्धि रुकी है जो दलहनी फसलों की वृद्धि में सहायक होते हैं। कीटनाशकों के असंतुलित प्रयोग से कई रोग और बीमारियां हरित क्रांति की ही देन हैं। अब हमें अपने खेती करने के तरीके में बदलाव लाना होगा और जैविक खेती की ओर लौटना होगा तभी हम लंबे समय तक भूमि से खाद्यान्न उपजा सकते हैं।

एक समय था जब खाद्यान्नों की बौनी प्रजातियों ने तमाम विकासशील देशों को भुखमरी और अकाल से छुटकारा दिलाया पर अब दुनिया के सभी देश खाद्यान्न की घोर कमी के कारण महंगाई के कठिन दौर से गुजर रहे हैं। खाद्यान्न की कमी का कारण ब्राजील और अमेरिका द्वारा जैव ईंधन में खाद्यान्नों के इस्तेमाल करने तथा अमेरिका द्वारा मांसाहार के लिए पशुओं को खाद्यान्न खिलाना भी गरीबों के मुंह से निवाला छीनने जैसा है । ग्लोबल वार्मिंग के कारण आज अमरीकी किसान बेतहाशा बारिश से परेशान हैं तो आस्ट्रेलिया के गेहूं उत्पादक किसान सूखे की मार से त्रस्त हैं। चीन में भी इस बार कम पैदावार होने का अनुमान है। हमारे यहां समय से पूर्व मानसून आ जाने से बढ़िया पैदावार होने का अनुमान लगाया जा सकता है।

हरित क्रांति ने छोटे किसानों की मुश्किलें और बढ़ा दी हैं। आज हरित क्रांति के जो भी प्रयोग हो रहे हैं वे प्रयोगशालाओं तक ही सीमित रहते हैं। आम किसानों को गांवों तक इसकी जानकारी मिल ही नहीं रही है। अपने खेतों में अधिक उपज लेने के लिए इन किसानों को उन्नत बीज, उर्वरक तथा दूसरे साजोसामान की तत्काल आवश्यकता होती है, इसके लिए पैसा भी तुरंत चाहिए। बैंकों तथा अन्य सरकारी एजेंसियों से इतने कम समय में पैसा मिलना मुश्किल है। हारकर ये किसान अपने एटीएम (साहूकार) के पास जाते हैं और अपनी जमीन गिरवी रखकर अधिक ब्याजदर पर कर्ज लेते हैं। दूसरे हरित क्रांति भरपूर सिंचाई पर आधारित है जो सब जगह संभव नहीं है। वर्षा और मानसून के भरोसे हरित क्रांति के नए प्रयोग सफल नहीं होते और फसल सूखने तथा कर्ज के तले दबने से ये किसान आत्महत्या करने को मजबूर हो जाते हैं।

मत-सम्मत

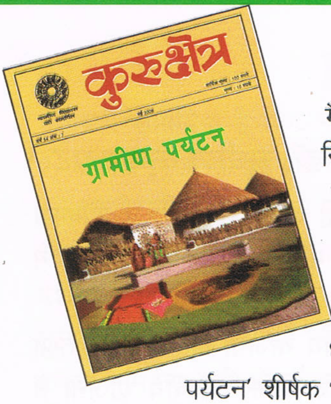

मैं 'कुरुक्षेत्र' पत्रिका का चार वर्षों से नियमित पाठक हूं। इस पत्रिका की विशेषता यह है कि ग्राम स्तर की समस्याएं हों, खूबियां हों या खमियां हों इन सभी पर ध्यान दिया जाता है। इसके लिए कुरुक्षेत्र भारतीय ग्रामीणों की ओर से धन्यवाद की पात्र है। मई का अंक 'ग्रामीण पर्यटन' शीर्षक भारत के विभिन्न राज्यों की सुन्दरता को दर्शाता है। ग्रामीण पर्यटन वास्तव में ग्रामीणों के हुनर को जानने तथा पहचानने के साथ उद्योग – धंधों को भी प्रोत्साहित करता है। इससे राष्ट्र को राजस्व की प्राप्ति होती है। भारत में पर्यटन को आर्थिक तथा सामाजिक रूप से मजबूती प्रदान करने की जरूरत है।

अजय कुमार शर्मा, गिरिडीह (झारखण्ड)

कुरुक्षेत्र पत्रिका के मई अंक को मैंने प्रथम बार पढ़ा। पढ़ने के बाद मुझे लगा कि यह पत्रिका अन्य सभी पत्रिकाओं की अपेक्षा अधिक ज्ञानवर्द्धक हैं। मई अंक के पढ़ने से मुझे ग्रामीण संस्कृति, वहां के रहन–सहन, खान–पान, पहनावे, रोजगार आदि के बारे में उचित जानकारी प्राप्त हुई। अधिकतर सभी लेखकों के लेख काफी लाभप्रद हैं। आज के इस आधुनिक युग में लोग गांव का महत्व भूलते जा रहे हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस पत्रिका को पढ़ने के बाद सभी व्यक्ति गांव के महत्व से परिचित हो सकेंगे। इस पत्रिका की सबसे अच्छी बात यह है कि एक तो यह कि पत्रिका का किफायती मूल्य है। प्रत्येक व्यक्ति इसे खरीद सकता है। दूसरा यह कि इसमें फालतू बातें जैसे – विज्ञापन आदि नहीं है। तीसरा यह कि इसमें शीर्षक के अनुसार ही सामग्री प्रकाशित है जो एक उत्कृष्ट पत्रिका की पहचान है।

केशब गोयल, ग्रेटर नोएडा (यू.पी)

'करुक्षेत्र' का मई अंक प्राप्त हुआ। ग्रामीण क्षेत्र में पर्यटन की विभिन्न संभावनाएं किस प्रकार क्रियान्वित होती हैं, जानकारी प्राप्त हुई। कुरुक्षेत्र के ग्रामीण पर्यटन पर केंद्रित अंक में डॉ. राजेश कुमार व्यास, डॉ. ओ० पी० शर्मा के लेख ग्रामीण पर्यटन का विश्लेषण करते हैं तथा असीमित संभावनाओं के साथ–साथ इस क्षेत्र में चुनौतियों की ओर भी इंगित करते हैं। अपने घर के एक कोने में लगी घृतकुमारी के बारे में 'मधु ज्योत्सना' के लेख ने इसके विलक्षण औषध गुणों के बारे में बताया।

सुधांशु पाण्डेय, स्वर्गद्वार, अयोध्या

मई 2008 ग्रामीण पर्यटन पर केंद्रित अंक ने शहरों तक सीमित पर्यटन को ग्रामीण क्षेत्रों तक ले जाने की स्वागत योग्य पहल की है। लेकिन दुख की बात यह है कि हमारे गांव गरीबी, कुपोषण एवं गन्दगी से इतने सराबोर है कि पर्यटक वहां जाना पंसद नहीं करता। हमने पश्चिम का अध कचरा आर्थिक विकास का मॉडल अपनाया है जिससे गांवों के विकास के संसाधन शहरों के पेटों में समा रहे हैं। एक प्रश्न और उठता है कि पूर्वजों के वैभव को दिखा दिखा कर हम कब तक पर्यटकों को लुभाते रहेंगे। हम पर्यटन के क्षेत्र में गांवों में ऐसा नया क्या कर रहे हैं जो पर्यटकों को गांवों की ओर खींचे। कुरुक्षेत्र ने राजस्थान का पर्यटन परिदृश्यः तथ्य और चुनौतियों के रूप में एक सराहनीय आलेख दिया है। राजस्थान को पर्यटन से जितना आर्थिक लाभ हो रहा है उसकी तुलना में उसका सांस्कृतिक, सामाजिक तथा नारी गरिमा का क्षरण हो रहा है। अतः पर्यटन उद्योग राजस्थान के लिए अभिशाप न बने इस पर विचार होना चाहिए।

ठाकुर सोहन सिंह भदोरिया, बीकानेर

ग्रामीण पर्यटन पर केन्द्रित कुरुक्षेत्र का मई अंक देखा। भारत में शहरी पर्यटन का पर्याप्त विकास हो चुका है किन्तु ग्रामीण पर्यटन का विकास नहीं हो सका है। हमारी राज्य की सरकारों को इस दिशा में पर्याप्त प्रयत्न करना होगा। आदिवासी बहुल प्रांतों तथा पूर्वोत्तर के प्रांतों में कितने आदिवासी समाज यत्र तत्र सर्वत्र फैले हैं उनके सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा उनके रहन सहन, जीविका, पर्व त्यौहार, सभ्यता संस्कृति को करीब से देखने समझने की आवश्यकता ग्रामीण पर्यटन को बढ़ावा देने में सक्षम है। जम्मू कश्मीर, राजस्थान, उ. प्र., म. प्र., बिहार आदि राज्यों में भी ग्रामीण पर्यटन की पर्याप्त संभवानाएं हैं। जरूरत है इनके विषय में अधिक से अधिक जानकारी देकर पर्यटकों के बीच इन्हें लोकप्रिय बनाने की। अंक में राजेश व्यास, डॉ. सुधीश पटेल, निर्मल आनन्द, ओ.पी. शर्मा, गुंजन श्रीवास्तव, सुभाष सेतिया के लेख जानकारी देने वाले हैं। घृतकुमारी के विषय में मधु ज्योत्सना ने सुंदर ज्ञानवर्धक लेख लिखा हैं। अपने संपादकीय आलेख में कई जरूरी बातें रखने के लिए कोटि–कोटि बधाई।

सविता यादव, मुराई–बाग, रायबरेली (उ० प्र०)

हर बार की तरह मई 2008 का ग्रामीण पर्यटन पर आधारित कुरुक्षेत्र का यह अंक जानकारी से भरपूर रहा। गिरीश चंद्र पांडे जी का लेख "अतुल्य भारत में ग्रामीण पर्यटन" पढ़कर पता चला कि सरकार अभी 1272 गांवों को चिन्हित कर चुकी है, जो पर्यटन की दृष्टि से विशेष महत्व के हैं, परन्तु अभी भी ऐसे हजारों गांव हैं, जो पर्यटन की दृष्टि से विशेष महत्व रख सकते हैं। उदाहरण के लिए झारखण्ड के बासुकीनाथ स्थित दुःख हरणनाथ मंदिर (भंगाबांध) जो चारों ओर पहाड़ियों और वृक्षों से घिरा होने के कारण काफी आकर्षक दिखते हैं। ऐसे ही कई ऐसे स्थल हैं, जो, पर्यटन के लिहाज से काफी फायदेमंद साबित हो सकते हैं। हर बार की तरह संपादकीय तथा बाहरी आवरण काफी अच्छा था।

मोहित कुमार झा, ग्राम–भंगाबांध ('झारखण्ड')

'कुरुक्षेत्र' ग्रामीण विकास की एक अनमोल पत्रिका है। भारतवर्ष की 71 प्रतिशत जनसंख्या गांव में बसती है। यह पत्रिका भारत के सभी गांवों को विकसित करती है। पत्रिका बढ़ती जनसंख्या को भी काबू कर सकती है। यह पत्रिका तभी सार्थक होगी जब भारत के प्रत्येक गांव में पहुंचेगी।

मुकेश तिवारी, ग्वालियर (म० प्र०)

कृषि में हरित क्रान्ति का ताना-बाना

डॉ. सुधीश कुमार पटेल

सदियों से भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान होने के बाद भी, आज देश दहशत के मुहाने पर खड़ा है। वे दिन लद गए, जब इस बात से हमारा सीना फूल जाता था कि हमारा देश रातों–रात हरित क्रान्ति से, कृषि उत्पादन के क्षेत्र में आत्म–निर्भर बन गया । अब हम आयात पर निर्भर न रहते हुए अपने यहां प्रचुर मात्रा में अन्न उपजाते हैं। वर्ष 2004 तक हम खाद्यान्नों का निर्यात करते थे। किन्तु सन् 2005 में सरकार को लगा कि घरेलू भूख शांत करने के लिए कृषि उत्पादन में सुधार लाना होगा और उसने निर्यात को रोकने के लिए स्टियरिंग व्हील को उल्टी दिशा में कुछ ज्यादा ही घुमा दिया। अब हम गेहूं, दालों और खाद्य तेलों के विशुद्ध आयातक बन गए है।

खाद्य सुरक्षा को बनाए रखने के क्षेत्र में नई चुनौतियों और अवसरों के साथ 21वीं सदी की शुरूआत हो चुकी है। प्रमुख चुनौतियां हैं–जलवायु परिवर्तन, पेट्रोलियम आधारित ऊर्जा की बढ़ती कीमतों के कारण, ईंधन उत्पादन के लिए खेतों का बदलता स्वरूप, कृषि की प्रगति के लिए आवश्यक इकोलॉजी की होती क्षति और निर्बाध रूप से पनपते कीटनाशक। अब सौभाग्य से विज्ञान और तकनीक के क्षेत्र, विशेष रूप से बायोटेक्नोलॉजी, सूचना–संचार तथा अंतरिक्ष तकनीक के क्षेत्र में नई खोजों ने इकोलॉजी को नुकसान पहुंचाए बिना एक लंबी हरित क्रांति के युग की शुरूआत की है। वस्तुतः अब हरित क्रान्ति से तात्पर्य कृषि की उत्पादन तकनीक को सुधारने एवं कृषि उत्पादन में वृद्धि करने से है। इसमें सघन सिंचाई, अधिक उपज देने वाले बीजों (संकर बीज) का प्रयोग, रासायनिक उर्वरक व कीटनाशक तथा आधुनिक यंत्रों के प्रयोग के फलस्वरूप सफलता प्राप्त होगी।

जैविक कृषि पद्धति को नई जेनेटिक्स के साथ फसल – पशुधन को शामिल करने की जरूरत है। पर इसके लिए वैश्विक बायोटेक्नोलॉजी विनियामक व्यवस्था को स्वीकार करना पड़ेगा। जिसका आधार पर्यावरण सुरक्षा, उपभोक्ता का स्वास्थ्य तथा देश की बायो सुरक्षा होनी चाहिए। एक दूसरा क्षेत्र जिस पर बहुत अधिक ध्यान दिए जाने की जरूरत है वह है तकनीक के विकास से लेकर, उसके प्रचार–प्रसार तक महिलाओं को मुख्य धारा में शामिल करना।

स्वतंत्रता के बाद भारत ने पंचवर्षीय योजना को अपनाया तथा कृषि पर विशेष ध्यान दिया, खासकर प्रथम पंचवर्षीय योजना में अच्छी सफलता प्राप्त की। लेकिन अगली दो पंचवर्षीय योजना में कृषि में गिरावट आयी और खाद्य सुरक्षा के लिये विदेशों पर निर्भर रहना पड़ा। अतः आत्म निर्भरता के लिए एक वर्षीय योजना का संचालन किया गया, जिसमें हरित क्रान्ति को अपनाने से अच्छे परिणाम प्राप्त हुए। आज भारतीय किसान भयावह आर्थिक संकट के दौर से गुजर रहा है। ओला, तूफान, अतिवर्षा, पाला, चक्रवात, सूखा, बाढ़ आदि प्रतिकूल मौसम की मार से आज खेती उजड़ रही है। खेत में काम करने के लिए मजदूर नहीं है। वर्तमान कृषि नीति भूमि सुधार और भूमि वितरण को गम्भीरता से नहीं ले रही है, जिसकी वजह से किसानों की कृषि के प्रति उदासीनता बढ़ रही है।

> हरित क्रान्ति की संकल्पना का प्रादुर्भाव सर्वप्रथम अमेरिका में डॉ. नोरमोन ई. बोरलॉग के प्रयासों से हुआ, जबकि भारत के संदर्भ में इसका प्रयोग सन् 1966 में डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन के प्रयासों के फलस्वरूप हुआ। किन्तु नई हरित क्रान्ति में मानकीकरण के लिए जैविक और हरित कृषि दोनों रास्तों को अपनाने की जरूरत है। वास्तव में जैविक कृषि में खनिज उर्वरकों, रासायनिक कीटनाशकों और जेनेटिकली मोडीफाइड फसलों की प्रजातियों का उपयोग नहीं किया जाता। हरित कृषि में समाकलित कीट प्रबंधन पौष्टिक तत्वों और समुचित फसल की प्रजातियों का, फसल उत्पादन में उपयोग किया जाता है।

तमाम सरकारी दावों के बावजूद, आज भारतीय किसानों की स्थिति अत्यन्त दयनीय और विपन्न है, आज धरती पुत्र किसान दीन और असहाय हो गया है। किसान को उसकी उपज का उचित मूल्य न मिलना, सरकार द्वारा जल–संरक्षण व सिंचाई की जिम्मेदारी को ठीक से न निभाना, सरकार व कंपनियों द्वारा मिट्टी के प्राकृतिक उपजाऊपन व पर्यावरण को क्षतिग्रस्त करने वाली महंगी कृषि तकनीक का प्रचार–प्रसार करना, सामाजिक कुरीतियों में वृद्धि तथा आपसी सहयोग की कमी। जब इस संकट के प्रतिकूल परिणाम किसानों के गहरे दुःख–दर्द व निराशा के रूप में सामने आने लगे तो इस संकट के इन बुनियादी कारणों को दूर करने के स्थान पर महंगी तकनीकों व जी.एम. जैसे कई खतरों की संभावनाओं से भरे बीजों को और भी व्यापक स्तर पर फैलाने की छूट सरकार देने लगी, इस तरह संकट का समाधान तो हो ही नहीं सकता था, परिणाम इसके विपरीत हुआ। कृषि और खाद्य अर्थव्यवस्था की विशेषज्ञ प्रोफेसर उत्सा पटनायक की यह

चेतावनी सामयिक है कि "भारत भूख का गणतंत्र बनता जा रहा है, क्योंकि भूख से बढ़कर गरीबी का कोई सबूत नहीं है।"

इक्कीसवीं सदी के नये स्वरूप में देश हर क्षेत्र में तरक्की कर रहा है, वर्तमान दौर आर्थिक समृद्धि का है, लेकिन कृषि प्रधान देश का यह दुर्भाग्य ही कहा जायेगा कि विश्व के अन्य देशों की तुलना में भारतीय कृषकों की हालत चिंतनीय है। बड़ी संख्या में कृषक भूमिहीन श्रमिकों के रूप में जीविकोपार्जन के लिए बाध्य हो रहे हैं, भारतीय कृषि समस्याओं से घिरी है। आज देश के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान केवल 18 प्रतिशत रह गया है, जबकि देश की 60 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर आश्रित है। कृषि पर निर्भर जनसंख्या का 85 प्रतिशत भूमिहीन किसान है। लगभग 78 प्रतिशत कृषि जोतें 2 हैक्टेयर से छोटी हैं और अधिकांश कृषक ऋणग्रस्त हैं। खाद्यान्न फसलों का 20 प्रतिशत व फलों व सब्जियों का 40 प्रतिशत बिना उपयोग के नष्ट हो जाता है। भारतीय कृषि अभी भी मानसून पर निर्भर है। केवल 33 प्रतिशत भूमि ही सिंचित है। रासायनिक उर्वरक व पौध संरक्षण दवाइयों के उपयोग ने भूमि की उर्वरता घटाई है और फसलों की उपयोगिता पर प्रश्न चिन्ह लगाये हैं, अभी भी कृषकों को अपनी फसल का लाभदायक मूल्य नहीं मिलता है। पीढ़ियां गुजरी पर समस्याएं ज्यों की त्यों बनी हुई हैं, किसानों की हालत बद से बदतर हो रही है।

अमेरिकी विदेश मंत्री कोंडालिजा राइस का यह बयान कि भारत और चीन के लोगों की बढ़ती खुराक विश्व खाद्य संकट के लिए जिम्मेदार है, यह भोजन के बुनियादी अधिकार के कत्ल की कोशिश है तथा दुनिया के विकासशील देशों के साथ क्रूर मजाक है। यह सच है कि घरेलू खाद्य संकट का ताना–बाना वैश्विक स्तर की कठिन परिस्थितियों में उलझा हुआ है तथा वैश्विक आपूर्ति की हालत भी चिंता जनक है, अब चालीस और पचास के दशक जैसे हालात नहीं रहे, जब खाद्य पदार्थों की बहुतायत थी और भारत सरकार यह मानने लगी थी कि कृषि क्षेत्र को नजर अंदाज किया जा सकता है। अनाज की कमी के लिए निस्संदेह मौसम का बदलाव भी प्रमुख कारण है। वर्षा की स्थिति डांवाडोल है और तापमान में भी बड़े पैमाने पर उतार–चढ़ाव होता रहता है। पेट्रोलियम उत्पादों की बढ़ती कीमतें, देश और दुनिया को अनाज उत्पादन की कीमत पर, जैविक ईंधन की खेती की ओर धकेल रही है। पानी के स्रोत भी तेजी से सिकुड़ रहे हैं। बीजों के स्टॉक के पुनरुत्पादन की कमी के चलते भारत संकरित प्रजातियों के उत्पादन की ओर आगे बढ़ रहा है। हरित क्रांति चूंकि सघन सिंचाई पर आधारित है अतः नदी घाटियों पर बड़े–बड़े बांध बनाकर नहरें निकाली गईं, जिससे जहां एक ओर सिंचाई के क्षेत्र में विस्तार हुआ वहीं दूसरी ओर विद्युत के उत्पादन को भी बढ़ाया गया, जिससे ऊर्जा पूर्ति की जा सके। संकर बीजों के प्रयोग से न केवल उत्पादन में बल्कि प्रति हेक्टयेर उत्पादकता में भी वृद्धि हुई। चूंकि हरित क्रान्ति रासायनिक उर्वरक एवं कीटनाशक दवाइयों के प्रयोग पर निर्भर है अतः इनके उत्पादन करने वाले उद्योगों को भी बढ़ावा मिला। उर्वरक उद्योग का विकास इसी के परिणाम स्वरूप ही हुआ।

हरित क्रान्ति की बदौलत अनाज उत्पादन में लगाई गई छलांग के चार दशक बाद, अब भारत बढ़ती आबादी के लिए खाद्य जरूरतों को पूरा करने के लिए कृषिगत संकट का सामना कर त्राहि–त्राहि मचा रहा है। खाद्यान्न सुरक्षा के ऐसे हालात आतंकवाद और नक्सलवाद से भी अधिक खतरनाक साबित हो सकते हैं। खाद्य पदार्थों के मामले में हमारी आत्मनिर्भरता पर भी संदेह के बादल मंडरा रहे हैं, क्योंकि कृषि उत्पादन तेजी से घट रहा है। भारत और चीन में जिस रफ़्तार से महंगाई बढ़ी है उस रफ़्तार से फसलों के दाम नहीं बढ़ रहे हैं। कृषि उपकरण, उन्नत बीज, कीटनाशक, बिजली, रासायनिक उर्वरक, डीजल, कृषि मजदूरों की मजदूरी और माल ढुलाई के भाड़े में लगातार आसमान छूती कीमतों के कारण कृषि घाटे का सौदा साबित हो रही है। साथ ही मौसम की मार ने समस्या को और अधिक विकराल बना दिया है।

सोयाबीन की फसल पर कीटनाशक दवाई का छिड़काव

जब तक हम किसानों को सक्षम और खेती को मुनाफे का व्यवसाय न बना दे, परिस्थितियां बदलने वाली नहीं है। आज खेती कोई करना नहीं चाहता, जो कर रहा है वह मजबूरी में। किसानों द्वारा फसल उत्पादन में एक बार में जो लागत लगती है वह निश्चित भी नहीं है कि वापस

आयेगी। भारतीय कृषि की प्रकृति पर निर्भरता, सिंचाई के सीमित साधन तथा आज भी पूरा देश बिजली के अभाव से ग्रस्त है, इससे खेत खाली और परती रह जाते हैं या फसल पानी के अभाव में सूखकर नष्ट हो जाती है, खेती चौपट हो जाती है। भारत में आज भी इतनी कुव्वत है कि अपना कृषि उत्पादन बढ़ा सके, लेकिन हमें ऐसी नीतियों की दरकार है, जिनका फोकस कृषि उत्पादन बढ़ाने पर हो, न कि उपजाऊ जमीन पर हवाई अड्डे बनाने और शहरी कॉलोनियां बनाने पर। इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि भारत विदेश से 1600 रुपये प्रति क्विंटल गेहूं खरीद रहा है, लेकिन अपने किसानों को वह 1200 रुपये देना भी उचित नहीं समझता है। इसका कर्ज माफी से इलाज नहीं हो सकता ।

हरित क्रान्ति से जहां उत्पादन में वृद्धि हुई हैं वहीं दूसरे नकारात्मक प्रभाव भी परिलक्षित होते हैं। हरित क्रान्ति सिंचाई पर आधारित है अतः इसका प्रभाव वहीं तक सीमित है जहां यह सुविधा उपलब्ध है, उदाहरणस्वरूप पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, तथा पूर्वी तटीय प्रदेश (महानदी, गोदावरी तथा कावेरी का डेल्टाई क्षेत्र)। दूसरी ओर सिंचाई के विस्तार के लिए बड़े–बड़े बांध बनाए गए हैं जिनकी लागत (अधिक होने के साथ–साथ) और समय अधिक होता है तथा जिन्होंने सामाजिक एवं पर्यावरणीय समस्याओं को भी जन्म दिया है। सिंचाई के लिए नहरें निकाली गयी हैं, नहरों से जहां एक ओर जल के उपयोग का कुप्रबंधन हुआ है (वाष्पन आदि द्वारा जल का नुकसान) वहीं दूसरी ओर अत्यधिक सिंचाई के कारण केशिकत्व के प्रभाव में मृदा में लवणता एवं ऊसरपन को जन्म दिया है। रासायनिक खादों एवं कीटनाशकों के प्रयोग से मृदा में स्वास्थ्य पर कुप्रभाव पड़ा है साथ ही जैव विविधता में भी ह्रास हुआ है। उदाहरण स्वरूप विभिन्न प्रकार के कीट–पतंगें तथा गिद्ध आदि का। ज्ञात है इस संकल्पना के अन्तर्गत अधिक उपज देने वाले बीजों का प्रयोग किया जाता है, चूंकि संकर बीज के रूप में गेहूं, चावल, मक्का एवं आलू का ही प्रयोग किया गया जिनका विकसित राष्ट्रों में विकास हो चुका था। अन्य फसलों के (विकास में) उत्पादनों को बढ़ावा न मिलने से फसलों का विविधिकरण न हो सका, परिणामस्वरूप दलहन व तिलहन जैसी फसलों में हम आत्म निर्भर न हो सके। बीजों का संकरण चूंकि जीनों के परिवर्तन पर आधारित है अतः इस विधि से फसलों ने अपने मूल स्वरूप को खो दिया है उदाहरण के तौर पर खाद्य (फसल) विशेष के स्वाद में परिवर्तन और साथ ही यंत्रीकरण से प्रदूषण को बढ़ावा मिला ।

विकास से तात्पर्य उत्पादन में वृद्धि के साथ–साथ सामाजिक न्याय एवं पर्यावरण संतुलन अर्थात् सतत् विकास से है, किन्तु हरित क्रान्ति ने केवल फसल विशेष के उत्पादन में वृद्धि की है, जबकि सामाजिक, क्षेत्रीय एवं पर्यावरणीय असंतुलन भी पनपा है। जहां पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश तथा पूर्वी तटीय प्रदेशों का विकास हुआ, वहीं (आर्द्र–उपार्द्र) बाढ़ग्रसित, शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों की स्थिति दयनीय रही, अतः इसने क्षेत्रीय असंतुलन को और बढ़ाया है। स्वतंत्रता के समय जहां पंजाब एवं बिहार की स्थिति लगभग समान थी। प्रति व्यक्ति आय में अन्तर न के बराबर था (बिहार में ज्यादा थी), वहीं हरित क्रान्ति के बाद, आज पंजाब पहले स्थान पर है, तो बिहार सबसे पिछड़े राज्यों में आकर खड़ा है।

हरित क्रांति की संकल्पना पूंजी लागत पर निर्भर है, अतः छोटे एवं सीमांत किसान इससे वंचित रहे। आज पूरे देश के किसानों की स्थिति को अच्छा नहीं कहा जा सकता, क्योंकि पीड़ित क्षेत्र के अलावा अन्य क्षेत्रों में कमजोर किसानों द्वारा आत्महत्या, भुखमरी, बीमारी और कुपोषण से मौत के समाचार मिलते रहते हैं। हरित क्रान्ति के संदर्भ में यह सवाल बहुत प्रासंगिक बन गया है कि आखिर किस तरह की नीतियां व कार्यक्रम अपनाकर वर्तमान कृषि संकट को दूर किया जा सकता है। एक बात तो बहुत स्पष्ट है कि भारतीय कमजोर आर्थिक परिदृश्य में किसानों के लिए सस्ती तकनीक ही हर दृष्टि से उचित है, महंगी तकनीक बहुत शीघ्र ही व विशेषकर प्रतिकूल मौसम के दौर में, छोटे किसानों को कर्ज के ऐसे दुष्चक्र में, धकेल देती है, जिससे बाहर निकलना कठिन हो जाता है। किसी गांव में सस्ती तकनीक से सही उत्पादकता कैसे प्राप्त की जाए, इसके लिए जरूरी है कि गांव व उसके आस–पास उपलब्ध संसाधनों का ही बेहतर से बेहतर उपयोग किया जाए व बाजार के महंगे इनपुट जैसे – रासायनिक खाद् व कीटनाशक दवा व बड़ी कंपनी के महंगे बीजों, पर निर्भरता कम की जाए।

खेती की पुरानी और आधुनिक तकनीकों के बीच तालमेल बैठाकर, यदि गांव में ऐसे कार्यक्रम अपनाए जाएं, जिनसे गांव में हरियाली, वृक्ष, चारागाह बढ़े, जल संरक्षण हो तो कम्पोस्ट, गोबर, गोमूत्र, पत्ती, फसल अवशेष आदि का बेहतर उपयोग करते हुए किसान बहुत कम खर्च में उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं। साथ ही कृषि व पशु पालन आधारित कुटीर उद्योग, खादी व लघु उद्योग का भी प्रसार हो, तो गांव का आर्थिक संकट अवश्य दूर होगा। यह सोच महात्मा गांधी की गांवों की आत्म

निर्भरता की सोच के बहुत नजदीक है। यह सोच आज के भूमंडलीकरण के दौर में पहले से भी अधिक प्रासंगिक हो गई है। इसके लिए परंपरागत कृषि, सिंचाई, पशुपालन आदि से बहुत कुछ सीखा जा सकता है। इस सोच में परंपरागत बीजों व फसल चक्रों को बचाने का बहुत महत्व है, क्योंकि जलवायु, मिट्टी व पर्यावरण के लिए सबसे उपयुक्त है व इस परिवेश के लिए उनकी अनुकूलता वर्षों के अनुभव से तय हुई है।

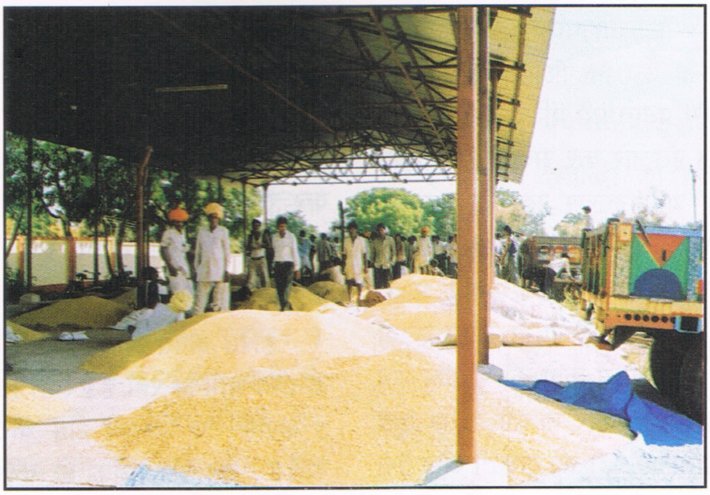

अनाज मंडी में बिचौलियों और आढ़तियों के बीच पिसता किसान

सदाबहार हरित क्रान्ति के पहले कदम के तौर पर हमें किसानों को पानी की सुनिश्चित आपूर्ति और वर्षा के जल के संग्रहण पर काम करना होगा। कुओं और तालाबों के निर्माण से उन क्षेत्रों में दोहरी फसलें ली जा सकेंगी, जहां अभी साल में सिर्फ एक ही फसल ली जा रही है। यह अनाज उत्पादन को दुगने से भी अधिक कर सकता है। ग्लोबल वार्मिंग और पानी की कमी को देखते हुए हमें फसलों की ऐसी वैराइटी विकसित करने की जरूरत है, जो सूखे में भी उग सकें। एक बड़े पैमाने पर जेनेटिक विविधता फसलों की वैराइटियों में उपलब्ध है। इसे जीन और बीज बैंकों में संरक्षित किया जाना चाहिए, जिसके लिए झारखंड में अभियान चलाया जा रहा है। सबसे आखिरी बात यदि हमने कृषि के तौर–तरीके को नहीं बदला तो यह खेती चौपट हो जायेगी। किसानों को सुनिश्चित बाजार मिले और उत्पादन लागत इतनी हो कि मुनाफा कमाया जा सके। सबसे बड़ी बात, आसान कर्ज और फसल व अनाज के भंडारों के लिये बीमे की जरूरत है ताकि किसान सुरक्षित महसूस करें और खेती–किसानी का आकर्षण बरकरार रहे। अच्छी खबर यह है कि इस देश में अनाज उत्पादन बगैर ज्यादा मुश्किलों के बढ़ाया जा सकता है। हमारे पास फसलों की अच्छी वैराइटियां हैं और क्षमता भी, जिसका अभी तक पूर्ण उपयोग नहीं हुआ। हमारे पास अच्छी कृषि तकनीकें और ऐसे किसान हैं, जो खेतों को बखूबी समझते हैं। हमारी असली समस्या है आलसी और अनुत्पादक मशीनरी की। किसानों की दशा सुधारने के लिए जरूरी है कि हम इन समस्याओं का निराकरण करें। किसानों की फसल उत्पादन की लागत घटाई जाये और उत्पाद का उचित मूल्य दिलाया जाये। देश की मण्डियों पर मजबूत आढ़तियों का कब्जा है। कमजोर और असंगठित किसानों के सामने अनेक समस्यायें इनके द्वारा पैदा की जाती हैं। इन बिचौलियों–आढ़तियों को मालामाल बनाने वाली इस व्यवस्था को समाप्त किया जाये। वर्तमान व्यवस्था इन्हें बढ़ावा देकर, किसानों के हितों पर कुठाराघात कर रही है।

हरित क्रान्ति वास्तव में, न तो हरित थी और न ही किसी प्रकार की क्रान्ति, बल्कि यह एकमात्र वृद्धि (खाद्यान्नों) का ही सूचक बनकर रह गया है, यही कारण है कि प्रथम हरित क्रान्ति की सीमाओं को देखते हुए द्वितीय हरित क्रान्ति की मांग उठने लगी हैं। इसके अन्तर्गत उन क्षेत्रों में कृषि विकास पर विशेष ध्यान दिया जाएगा जो पहले से इससे वंचित रह गए हैं। फसलों के विविधिकरण पर जोर देते हुए कृषि तकनीक को पर्यावरण के अनुकूल बनाया जाएगा। रासायनिक उर्वरक के स्थान पर मिश्रित उर्वरक एवं जैव उर्वरक को बढ़ावा दिया जाएगा तथा सिचांई के लिए बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों के अतिरिक्त जल को शुष्क क्षेत्रों में पहुंचाकर समस्याओं के निदान पर बल दिया जाना है। कुल मिलाकर द्वितीय हरित क्रान्ति सतत् विकास की संकल्पना पर आधारित है। भविष्य में हमें पैदावार के अंतर को पाटने से आगे जाना होगा और तकनीकी ठहराव की समस्या से पार पाने के लिए तकनीक का विस्तार करना होगा। धरती के तापमान में वृद्धि की चुनौती और जलवायु परिवर्तन के अनुकूल अपने को ढालने की आवश्यकताओं को देखते हुए यह और भी जरूरी हो गया है, जलवायु परिवर्तन कृषि उत्पादन को बुरी तरह प्रभावित कर रही है। इससे तभी बचा जा सकेगा, यदि हम कुछ नयी प्रजातियों का पता लगा सके। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हम अपनी ईमानदार कोशिश से राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान प्रयासों को सुदृढ़ कर सदाबहार हरित क्रान्ति द्वारा कृषि उत्पादन बढ़ाने की भी गारंटी दे सकते हैं।

(लेखक चंचलबाई पटेल महिला महाविद्यालय, राइट टाउन, जबलपुर के वाणिज्य विभाग में कार्यरत हैं।)

ई–मेल : sudheeh_1973@rediffmail.com

भारत-दूसरी हरित क्रांति की ओर

अभिनय कुमार शर्मा

बहुत पहले एक बार हमारे प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा था। "हर चीज इंतजार कर सकती है, लेकिन खेती इंतजार नहीं कर सकती।" यही कारण रहा कि आगामी भारत की सरकारों ने कृषि उत्पादकता और कृषि विकास की निरंतर बढ़ोतरी को बहुत अधिक महत्व दिया। आज जबकि भारत सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से पूरे विश्व में अपना लोहा मनवा रहा है बावजूद इसके हमारी अर्थ व्यवस्था में कृषि की भूमिका अब भी सब से महत्वपूर्ण है क्योंकि हमारी सरकार मानती है कि भूखे पेट रहकर किसी भी तरह की प्रगति नहीं की जा सकती और वैसे भी भारत की 60–65 प्रतिशत की आबादी ग्रामीण पृष्ठभूमि की है।

. परन्तु जहां एक ओर उपरोक्त तथ्य सही है तो वहीं दूसरी ओर गाहे वगाहे हमें यह स्वीकार करना होगा कि पिछले कुछ वर्षों में सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का हिस्सा घटा है। इस समय सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का हिस्सा करीब 22 प्रतिशत के आसपास है। दसवीं पंचवर्षीय योजना के पहले तीन वर्षों में तो कृषि की औसत वृद्धि दर मात्र 1.5 प्रतिशत रही। भारत सरकार ने इन निराशाजनक रुझानों को बदलने के पक्के प्रयास किये हैं। आज जब भारत विकास के लिए महत्वाकांक्षी है, तो इसे देखते हुए हमारे कृषि वैज्ञानिकों, प्रौद्योगिकीविदों और प्रबंधकों के सामने चुनौतियां एकदम स्पष्ट हैं। ये चुनौतियां हैं– कृषि की विकास दर 4 प्रतिशत से अधिक कैसे हो? इसके लिए किस प्रकार के तकनीकी उपाय अपनाये जाने चाहिए? अनुसंधान और प्रसार के प्रयासों में किस तरह के बदलाव लाये जायें। जिससे किसानों खासतौर पर बारानी खेती वाले इलाकों के किसानों की आवश्यकता सही तरह से पूरी हो सके। क्या फसल आधारित दृष्टिकोण की बजाय फार्म प्रबंधन आधारित दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए? कृषि प्रसार प्रणाली का पुनर्गठन कर उसमें किस तरह नई जान फूंकी जाये जिससे नवीनतम प्रौद्योगिकी और फार्म प्रबंधन विधियां कृषक समुदाय तक पहुंच सके। कृषि में किन सुधारों की आवश्यकता है जिनसे कृषि उत्पादकता में बढ़ोतरी के फलस्वरूप किसानों को उपज का अधिक मूल्य मिल सके।

> आज जिस दूसरी हरित क्रांति के नवीन पायदान पर हम खड़ा होने की तमन्ना रखते हैं उसके लिए कृषि विज्ञानियों को नई उपलब्धियों के लिए तकनीकी आधार तैयार करने की दिशा में कार्य करना होगा। उन्हें कृषकों की समस्याओं के ऐसे समाधान खोजने होंगे जो फसल विशेष क्षेत्र, संसाधन विशेष और फार्म विशेष के लिए उपयुक्त हों। इस समय उपलब्ध प्रौद्योगिकी से भी 11वीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक वर्तमान खाद्य उत्पादन को दुगना किया जा सकता है।

अब हम उन अनुप्रयोगों के संदर्भ में बात करेंगे जिनके माध्यम से भारत उपरोक्त कृषि चुनौतियों का सफलतापूर्वक सामना कर सकेगा और दूसरी हरित क्रांति के परिवेश में आसानी से अपने कदम रख सकेगा।

अनुसंधान और प्रसार

हरित क्रांति लाने में कृषि अनुसंधान और प्रसार प्रणाली की केन्द्रीय भूमिका रही है। स्वतंत्रता के समय खाद्यान्न का उत्पादन 5 करोड़ टन था जो अब चार गुना से भी अधिक बढ़कर 20 करोड़ टन से अधिक हो गया है। अब हम पटसन और अन्य रेशों, दूध, गेहूं, चावल, फलों और सब्जियों, अंडा तथा मछली के अग्रणी उत्पादकों में से एक हैं। हमारा अनुसंधान केवल अधिक पैदावार देने वाली किस्मों के विकास और उत्पादन के बेहतर तरीकों तक ही सीमित नहीं रहा। बेहतर पशुधन प्रबंधन, जलजीव और समुद्री जीव पालन, प्राकृतिक संसाधनों का बेहतर प्रबंधन और इस्तेमाल तथा खेती के उन्नतशील औजारों और मशीनरी के विकास में भी हमें उल्लेखनीय सफलतायें मिली हैं। अनुमान है कि कृषि उत्पादन में आकलित विकास का लगभग आधा नयी खोजों और प्रौद्योगिकी के विकास से संभव हुआ है।

ऐसे में कृषि अनुसंधान और प्रसार प्रणाली को यह सुनिश्चित करना होगा कि समस्याओं के जो समाधान उपलब्ध हैं वे वास्तव में किसानों तक पहुंचे ताकि वे जल्द से जल्द उनका लाभ ले सकें। ऐसा नीतिगत ढांचा भी अपनाना होगा कि किसानों की आमदनी बढ़े।

सूचना

1974 में कृषि विज्ञान केन्द्रों की शुरूआत से ही ये संगठन अनुसंधान प्रयोगशालाओं से किसानों और अन्य उपयोगकर्ताओं तक प्रौद्योगिकी की जानकारी पहुंचाने वाले महत्वपूर्ण साधन सिद्ध हुए हैं। कृषि समुदाय की आवश्यकताओं और उपलब्ध संसाधनों के प्रति प्रासंगिकता को ध्यान में रखते हुए कृषि विज्ञान केन्द्र, प्रौद्योगिकी के मूल्यांकन, परिष्करण और प्रदर्शन का प्रभावी साधन

बन सकते हैं। ये किसानों को उच्च स्तरीय अनुसंधान और प्रशिक्षण का लाभ पहुंचा सकते हैं। अब तक 492 कृषि विज्ञान केन्द्रों की स्थापना हो चुकी है।

कृषि आधारित सभी उन्नत अर्थव्यवस्थायें ज्ञान पर आधारित अर्थव्यवस्थायें हैं। इसलिए किसानों के ज्ञान भण्डार को अधिक से अधिक व्यापक बनाने के हर संभव उपाय करने होंगे ताकि वे नई प्रौद्योगिकी का बेहतर इस्तेमाल कर सकें। किसानों की सूचना संबंधी आवश्यकतायें केवल प्रौद्योगिकी तक सीमित न होकर बहुमुखी हैं। उन्हें व्यवसाय के रूप में खेती, खेती के नये तरीकों, नई नीतियों, दूसरे किसानों के श्रेष्ठ तरीकों और बाजार संबंधी आसूचना की आवश्यकता है। अतः समय पर सूचना उपलब्ध होना हमारी कृषि के विकास के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

नॉलेज बैंक—आज हमारी प्रसार सेवाओं को विश्वसनीय सूचनाओं की मांग और तेजी से पूरा करने के लिए कमर कसनी होगी। नई सूचना प्रौद्योगिकी और संचार साधनों के माध्यम से यह संभव है। ये साधन न केवल शोधकर्ताओं और किसानों के बीच के भौतिक अवरोध को समाप्त करते हैं बल्कि किसानों को उनकी आवश्यकतानुसार सूचना भी उपलब्ध कराते हैं। यह उल्लेखनीय है कि भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने लगभग 200 कृषि विज्ञान केन्द्रों को इलेक्ट्रांनिक संपर्क से जोड़ने का फैसला किया है ताकि वे किसानों के लिए सूचना प्राप्ति का केन्द्र बन सकें। यही कृषि विज्ञान केन्द्र अपनी स्थापना वाले प्रत्येक जिले में "नॉलेज बैंक" के रूप में कार्य कर सकेंगे।

गतिशील और विकासमान अर्थव्यवस्था में कृषि विज्ञान केन्द्रों को प्रत्येक जिले का ऐसा केन्द्र बिन्दु बनना होगा जहां से कारगार भागीदारी के जरिये सूचना, ज्ञान और प्रौद्योगिकी इस्तेमाल करने वालों तक पहुंच सकें। उन्हें किसानों की जरूरतों के बारे में जानकारी अनुसंधान कर्त्ताओं तक पहुंचाने का कारगार माध्यम बनना होगा। ताकि अनुसंधान कार्यक्रमों को जरूरत के अनुरूप बनाया जा सके। उन्हें ये भी सुनिश्चित करना होगा कि अनुसंधान के नतीजे विशाल प्रयोगशालाओं से निकलकर भारतीय किसानों की मूल आवश्यकताओं को पूरा करें।

नई तकनीक से गेहूं की कटाई और गहाई एक साथ

जीन तकनीक अपनाकर दूसरी हरित क्रांति लाने का प्रयास

इक्कीसवीं शताब्दी की इस दुनिया में वैज्ञानिक किसी भी सजीव से अपनी जरूरतों की कोई भी जीन निकालकर, किसी अन्य सजीव में आरोपित कर सकने में समर्थ हैं। यही नहीं वैज्ञानिक डी.एन.ए. अणुओं को काट कर किसी अन्य जगह चिपका सकते हैं। आणविक जीव विज्ञान तथा जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हुए क्रांतिकारी विकास के कारण उक्त सभी उपलब्धियां संभव हुई हैं।

हम कृषि क्षेत्र में एक और क्रांति के युग में प्रवेश कर चुके हैं। यह क्रांति "जीन क्रांति" कहलाती है, जो जैव प्रौद्योगिकी के विकास से संभव हुई है। केन्द्र सरकार ने लगभग 4 साल पहले बी.टी. कपास के व्यावसायिक उत्पादन की अनुमति दे दी है। यह सरकार के पर्यावरण विभाग के जेनेटिक इंजीनियरिंग अप्रूवल कमेटी के द्वारा प्रदान की जाती है। जीईएसी द्वारा बी.टी. कपास की तीनों प्रजातियों मेक–12–162 व मेक–184 के उत्पादन की अनुमति दे दी गई है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के इन परीक्षणों के परिणामों से संतुष्ट होने के बाद ही बी.टी. कपास के व्यावसायिक उत्पादन की अनुमति दी गयी है। समिति ने यह भी संकेत दिया कि कुछ अन्य जी.एम. फसलों के जैव सुरक्षा मूल्यांकन के बाद व्यावसायिक उत्पादन की अनुमति दी जायेगी। जिन फसलों के व्यावसायिक उत्पादन की अनुमति दी जानी है वे हैं बैंगन, टमाटर, अरहर व मटर आदि। आशंका यह की जा रही थी कि बी.टी. कपास की फसल को चारे के रूप में लेने से पशुओं और उनके दूध को पीने से मनुष्यों पर घातक प्रभाव पड़ सकता है लेकिन वैज्ञानिक रूप से इसको प्रमाणित नहीं किया जा रहा है। सामान्यतया यह प्रवृत्ति रही है कि किसी भी नयी प्रौद्योगिकी का पहले विरोध ही किया गया है।

कपास देश की प्रथम ट्रांसजैनिक फ़सल है जिसके देश में व्यावसायिक उत्पादन की अनुमति दी गई। बी.टी. अवयव विगत पचास वर्षों में

जैव–कीटनाशक के रूप में प्रयोग किया जाता रहा है। लेकिन किसी को इससे परेशानी नहीं हुई। ट्रांसजैनिक फसलों के उत्पादन से जैवविविधता तक हमारी पहुंच दिनों दिन बढ़ती जा रही है। परंपरागत माध्यम से ऐसा संभव न था। इस बात की भी आवश्यकता है कि जैव–प्रौद्योगिकी अनुसंधान व नीति उन गरीबों की जरूरतों के अनुसार ही हो जो पूरी तरह कृषि पर निर्भर है। किसानों द्वारा ट्रांसजैनिक फसलों को तभी अपनाया जायेगा, जब सामान्य खतरों व हानियों, मानव स्वास्थ्य व पोषण पर पड़ने वाले दीर्घ कालीन प्रभाव व पर्यावरण तथा कृषि की हानि से संबंधित शंकायें दूर कर दी जायेगी।

उपरोक्त संपूर्ण विवरण के आधार पर यह कहा जाना प्रासंगिक ही होगा कि भारत सरकार कृषि क्षेत्र को उन्नतिशील बनाने के लिए सही किसानों को विकास की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए पूर्ण रूप से प्रतिबद्ध हैं। उसकी यह प्रतिबद्धता हमें इस बार के बजट में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। जिस तरह से किसानों के साठ हजार करोड़ रुपये के ऋण माफ किये गये हैं, कृषि में निवेश और अधिक बढ़ाने की बात कही गई है। वर्तमान में 12.5 प्रतिशत का निवेश हुआ तथा 11वीं पंचवर्षीय योजना में इसे 16 प्रतिशत करने का प्रावधान है तथा 50,0000 हेक्टेयर जमीन पर सिंचाई की सुविधा उपलब्ध कराने का प्रावधान रखा गया है, इससे साफ तौर पर इंगित होता है कि भारत सरकार ने कृषि जगत से जुड़े नकारात्मक रुझानों को दूर करने का दृढ़ निश्चय ले लिया है। उसकी इसी मानसिकता का ही दीर्घकालिक परिणाम है कि इस वर्ष रबी की फसल का 2001 के बाद रिकार्ड उत्पादन हुआ है। साथ ही उसने फैसला किया है कि किसानों के बीच खेती किसानी के अनुभव बांटने, नयी तकनीकों की जानकारी देने और बाजार का ज्ञान कराने हेतु अब गांवों में किसान विद्यालय खोले जायेंगे। इन विद्यालयों में कृषि के साथ पशुपालन औद्योगिकी, विपणन आदि कई ट्रेंडों की जानकारी रखने वाले प्रशिक्षक तैनात होंगे। न्याय पंचायत स्तर पर खोले जा रहे इन विद्यालयों को सरकार संसाधन उपलब्ध करायेगी।

ये सभी कदम दूसरी हरित क्रांति को दस्तक देने वाले ही हैं। इस बार की हरित क्रांति की विशेषता यह होगी कि ये केवल खाद्यान्न उत्पादन पर ही आधारित नहीं होगी बल्कि खाद्यान्न उत्पादन में जिन संसाधनों का प्रयोग किया जाता है। (पानी, खाद, बिजली, मिटटी आदि) उनके टिकाऊ प्रबंधन पर भी आधारित होगी ताकि एक तरफा विकास न हो, सर्वमुखी विकास हो। अंततः 21वीं सदी की हरित क्रांति को टिकाऊ हरित की संज्ञा दी जाएगी।

(लेखक यूएनइपी में नामांकित पत्रकार हैं।)
ई–मेल : sharmaabhinay@yahoo.co.in

सदस्यता कूपन

मैं/हम **कुरुक्षेत्र** का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहती हूं/चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 100 रुपये, दो वर्ष के लिए 180 रुपये, तीन वर्ष के लिए 250 रुपये का (जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक .... दिनांक .... संलग्न है।

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर निदेशक, प्रकाशन विभाग को नई दिल्ली में देय हो।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) ....

पता ....

.... पिन ....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक

प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, तल–7, रामकृष्णपुरम,

नई दिल्ली–110 066

दुष्प्रभावों के कारण वरदान से अभिशाप बनी हरित क्रान्ति

डॉ. अरविन्द सिंह

भारतीय कृषि में अधिक पैदावार देने वाली किस्मों, रासायनिक खादों, कीटनाशकों के इस्तेमाल तथा सिंचाई सुविधाओं के विस्तार के परिणामस्वरूप आई खाद्यान्न उत्पादन में अभूतपूर्व वृद्धि को हरित क्रान्ति के नाम से जाना जाता है। हरित क्रान्ति की शुरुआत 1965–66 में हुई थी। यह वह वर्ष था जब देश में सूखे की स्थिति थी तथा इसी वर्ष अधिक पैदावार देने वाली फसलों के बीज भी उपलब्ध थे। इस क्रान्ति के परिणामस्वरूप भारत खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर हो गया। हरित क्रान्ति से पूर्व देश में भुखमरी तथा कुपोषण की स्थिति थी और देश में खाद्यान्न की आपूर्ति को सुनिश्चित करने के लिए खाद्यान्नों का आयात दूसरे देशों से किया जाता था। देश में 1949–50 में खाद्यान्न उत्पादन लगभग 50 मिलियन टन था जो 1978 में हरित क्रान्ति के परिणामस्वरूप बढ़कर 130 मिलियन टन तक पहुंच गया। यह हरित क्रान्ति की ही देन है कि आज देश में खाद्यान्न उत्पादन लगभग 220 मिलियन टन तक पहुंच चुका है।

देश में हरित क्रान्ति के लिए मुख्यतः धान एवं गेहूं की बौनी प्रजातियां जिम्मेदार थीं। गेहूं की बौनी प्रजातियों का विकास विश्व प्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक डॉ. नार्मन बोरोलाग ने अन्तर्राष्ट्रीय गेहूं तथा मक्का सुधार केन्द्र, मेक्सिको में किया था। *नारीन–10* जापान की गेहूं की वह प्रजाति थी जिसका उपयोग गेहूं की बौनी प्रजातियों के विकास में किया गया था। इन बौनी प्रजातियों ने भारत सहित दुनिया के तमाम विकासशील देशों को भुखमरी एवं अकाल से छुटकारा दिलाया था। इस योगदान के लिए डॉ. नार्मन बोरोलाग को 1970 के नोबेल शान्ति पुरस्कार से नवाजा गया और दुनिया में उन्हें 'हरित क्रान्ति के जनक' के रूप में भी जाना जाता है। *सोनोरा 64* तथा *लरमा रोसो* गेहूं की वह बौनी प्रजातियां थी जिनका आगमन 1963 में भारत में हुआ था। *कल्याण सोना* तथा *सोनालिका* इन्हीं किस्मों का रूपान्तरित रूप थी जिनका विकास प्रसिद्ध कृषि वैज्ञानिक तथा वर्तमान में राज्य सभा सदस्य डॉ. एम. एस. स्वामीनाथन द्वारा किया गया था। इसलिए डॉ. एम. एस. स्वामीनाथन को 'भारत में हरित क्रान्ति के जनक' के रूप में जाना जाता है। उपर्युक्त प्रजातियों में अधिक पैदावार के साथ बीमारी रोधी गुण भी मौजूद थे।

धान की बौनी प्रजातियों का विकास अन्तर्राष्ट्रीय चावल अनुसंधान संस्थान, फिलिपिन्स में हुआ था। *डी–जियो–ऊ–जेन* ताईवान की वह बौनी धान की प्रजाति थी जिससे धान की बौनी प्रजातियां *ताइचुंग नेटिभ 1* तथा *आई आर–8* विकसित की गयी थी। भारत में इन प्रजातियों का आगमन 1966 में हुआ था। इन आयातित बौनी प्रजातियों से देश में *जया* तथा *रत्ना* नामक अर्द्ध–बौनी प्रजातियों का विकास किया गया।

हरित क्रान्ति एक ओर जहां देश से भुखमरी मिटाने में वरदान साबित हुई वहीं दूसरी ओर तमाम पार्श्व प्रभावों के चलते आज अभिशाप साबित हो रही है। भारत में हरित क्रान्ति का पार्श्व प्रभाव लगभग समाज के प्रत्येक क्षेत्र पर पड़ा है जो निम्नलिखित है –

> हरित क्रान्ति के फलस्वरूप खाद्यान्न उत्पादन में अभूतपूर्व वृद्धि तो हुई लेकिन इस क्रान्ति ने तमाम समस्याओं को भी जन्म दिया जो आज इस क्रान्ति के लाभ पर भारी पड़ रही हैं। पर्यावरण प्रदूषण, भूमि लवणता, भूमि अपरदन, जल–जमाव, जैव–विविधता की हानि, वनविनाश, भूमिगत जलस्तर में गिरावट, मच्छरजनित बीमारियों का बढ़ता कहर आदि कुछ ऐसी गम्भीर समस्यायें हैं जो देश में हरित क्रान्ति की देन हैं।

पारिस्थितिकी तथा पर्यावरण क्षेत्र

हरित क्रान्ति ने देश में पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण को सर्वाधिक प्रभावित किया है। हरित क्रान्ति के आगमन के परिणामस्वरूप देश में जंगलों के क्षेत्रफल में कमी आई है। आधुनिक यान्त्रिक औजारों के इस्तेमाल से जंगलों की कटाई कर उसे कृषि भूमि में परिवर्तित कर दिया गया। भारत में जंगल ह्रास की दर 1.5 मिलियन हेक्टेयर प्रतिवर्ष है जिसके परिणामस्वरूप 6000 मिलियन टन मिट्टी का बहाव प्रतिवर्ष होता है जिसमें नाइट्रोजन, फास्फोरस तथा पोटाश की मात्रा लगभग 5.50 मिलियन टन होती है। वन की कटाई के परिणामस्वरूप सूखे, बाढ़, जैव–विविधता की हानि तथा भूमंडलीय तापवृद्धि जैसी समस्यायें पैदा हुई हैं।

हरित क्रान्ति में रासायनिक खादों तथा कीटनाशकों के अंधाधुन्ध प्रयोग के परिणामस्वरूप जल, वायु तथा मृदा प्रदूषण में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। यहां तक कि भूमिगत जल भी प्रदूषित हो गया है। रासायनिक खादों पर जीवाणुओं की कार्रवाई से नाइट्रस आक्साइड नामक गैस का निर्माण होता है जो समतापमंडलीय ओजोन परत को क्षति पहुंचाती है। ओजोन परत रक्षा कवच के रूप में सूर्य की हानिकारक परा–बैंगनी किरणों को अवशोषित कर पृथ्वी के जीवों की रक्षा करती है।

धान की खेती के विस्तार के चलते मीथेन गैस की निकास की दर में वृद्धि हुई है जो तापवृद्धि के लिए जिम्मेदार है।

जल द्वारा खेत से रासायनिक खादों का बहाव तालाबों, नदियों तथा झीलों में होता है जो कि जल प्रदूषण को बढ़ावा देता है। जल में पोषक तत्वों की अधिकता को **'अतिपोषण'** कहते हैं। इस प्रकार का जल नील हरित शैवालों की वृद्धि को बढ़ावा देता है जिससे जल में कार्बनिक भार बढ़ जाता है परिणामस्वरूप ऑक्सीजन की कमी के कारण जलजीवों की मृत्यु होने लगती है। कार्बनिक पदार्थों के संचयन के कारण धीरे-धीरे अनुक्रमण की प्रक्रिया शुरू होती है परिणामस्वरूप नमभूमियां स्थलीय पारिस्थितिकतन्त्र में परिवर्तित हो जाती हैं। आज उत्तर भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में तालाबों की विलुप्ति एक प्रमुख समस्या है जो हरित क्रान्ति के अन्तर्गत रासायनिक खादों के अन्धाधुंध उपयोग की ही देन है। नाइट्रेट से प्रदूषित जल को पीने से *मिथेमोग्लोबिनेमिया* नामक बीमारी आमतौर से बच्चों में होती है जिसमें रक्त की आक्सीजन ढोने की शक्ति क्षीण हो जाती है परिणामस्वरूप श्वसन तन्त्र तथा तन्त्रिका तन्त्र पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

कीटनाशक खाद्य शृंखला द्वारा मनुष्य के शरीर में पहुंचकर स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। इण्डोसल्फान जिसका इस्तेमाल आमतौर से धान की खेती में होता है एक अत्यन्त ही खतरनाक रसायन होता है जो मनुष्यों में आंख, गुर्दा तथा यकृत को प्रभावित करता है। तमिलनाडु में इस रसायन के प्रयोग के कारण किसानों में विकृतियां देखने में आयी है। डीडीटी (डाईक्लोरो डाईफिनाइल ट्राईक्लोरो इथेन) जैसे घातक रसायनों का वातावरण में विघटन नहीं होता है जो खाद्य शृंखला द्वारा मनुष्य के शरीर में पहुंचकर वसा के साथ घुलकर एडीपोज ऊतकों में जमा हो जाता है। जब वसा का आक्सीकरण होता है तब डीडीटी मनुष्यों में हानिकारक प्रभाव डालता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार भारतीयों के शरीर में सर्वाधिक डीडीटी पाया जाता है। देश की आबादी में इसका स्तर 13-30 पीपीएम (पार्टस् पर मिलियन) तक पहुंच चुका है। इसके अतिरिक्त डीडीटी पक्षियों में इस्ट्रोजन नामक हार्मोन की गतिविधि को प्रभावित करता है जिससे अण्डे का खोल कमजोर हो जाता है। परिणामस्वरूप अण्डा समय से पूर्व ही फूट जाता है और भ्रूण की मृत्यु हो जाती है। डीडीटी, गिद्ध जैसी पक्षियों की गिरती जनसंख्या का एक प्रमुख कारण है।

रासायनिक खादों विशेषकर यूरिया के प्रयोग से मृदा अम्लीकरण को बढ़ावा मिला है जिससे मृदा के उपयोगी सूक्ष्मजीव प्रभावित हुए हैं। परिणामस्वरूप मृदा की उर्वरता में गिरावट आई है। हरित क्रान्ति से प्रभावित क्षेत्रों की मृदा में *राइजोबियम* जीवाणुओं की आबादी में गिरावट दर्ज की गयी है जो कि दलहनी फसलों के वृद्धि एवं विकास में सहायक होते हैं।

कृषि क्षेत्र

हरित क्रान्ति के पूर्व विभिन्न प्रकार की देशी फसलों को उगाने का चलन था लेकिन आज देशी फसलों की जगह कुछ संकर प्रजातियों का उपयोग होता है। इससे न सिर्फ जैव-विविधता में एकरूपता आई है अपितु जैव-विविधता की हानि भी हुई है। हरित क्रान्ति के अन्तर्गत संकर प्रजातियों के उपयोग के कारण पौष्टिक देशी प्रजातियों ने अपना महत्व खो दिया है। परिणामस्वरूप बहुत सी देशी प्रजातियां या तो विलुप्त हो चुकी हैं या विलुप्ति के कगार पर खड़ी हैं। देशी प्रजातियों की विलुप्ति आज चिन्ता का विषय है क्योंकि इनमें बहुत से उपयोगी गुण होते हैं, जिनका उपयोग हम भविष्य में वर्तमान फसलों की प्रजातियों के सुधार में कर सकते हैं।

मृदा अपरदन वृद्धि हरित क्रांति की देन

देश में मृदा अपरदन की दर में वृद्धि भी हरित क्रान्ति की ही देन है। हरित क्रान्ति के अन्तर्गत गहन कृषि के कारण भूमि संसाधनों पर दबाव पड़ा है जिससे मृदा अपरदन जैसी समस्या पैदा हुई है। रासायनिक खादों के अत्यधिक प्रयोग के कारण मृदा संरचना नष्ट हो जाती है परिणामस्वरूप जल तथा वायु द्वारा मृदा अपरदन को बढ़ावा मिलता है। देश की लगभग 25 प्रतिशत भूमि

अपरदन से प्रभावित है जो कि देश की अर्थव्यवस्था के लिए बड़ी हानि है। एक अनुमान के अनुसार मृदा की ऊपरी स्तर की प्रत्येक इंच की हानि गेहूं की पैदावार को 6 प्रतिशत तक कम कर देती है।

रासायनिक खादों के अन्धाधुन्ध इस्तेमाल के कारण मृदा में सूक्ष्म–तत्वों की कमी हो जाती है। नाइट्रोजन, फास्फोरस तथा पोटाश से युक्त रासायनिक खादों का उपयोग जब फसलों के लिए होता है तो फसलें खाद के अतिरिक्त नाइट्रोजन, फास्फोरस तथा पोटास के साथ–साथ मृदा से सूक्ष्म–तत्वों जैसे जिंक, मैंगनीज, कापर, मालिवेडनम, बोरान आदि को अधिक मात्रा में अवशोषित कर लेते हैं जिससे मिट्टी में इन तत्वों की कमी हो जाती है। हरित क्रान्ति से प्रभावित राज्यों जैसे पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, आन्ध्र प्रदेश तथा तमिलनाडु राज्यों में इन सूक्ष्म तत्वों की मृदा में कमी दर्ज की गयी है। इन सूक्ष्म–तत्वों की कमी से फसल की पैदावार प्रभावित होती है। उदाहरण के लिए जिंक की कमी से धान में खैरा रोग लग जाता है जबकि बोरान एवं मालिवेडनम की कमी से नाइट्रोजन स्थिरीकरण की प्रक्रिया प्रभावित होती है।

सिंचाई जल के अधिक उपयोग तथा कुप्रबन्धन के कारण मृदा लवणता तथा जल–जमाव जैसी समस्यायें पैदा हुई हैं। लवणीय मृदा में सोडियम, मैगनिशियम तथा कैल्शियम के क्लोराइड तथा सल्फेट की अधिकता होती है। देश की लगभग 7 मिलियन हेक्टेयर भूमि लवणता के कारण बंजर भूमि में परिवर्तित हो चुकी है। भूमि लवणता हरित क्रान्ति से प्रभावित राज्यों जैसे पंजाब, हरियाणा तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश की प्रमुख समस्या है।

जल–जमाव से प्रभावित भूमि में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है जिसके कारण विभिन्न प्रकार के उपयोगी सूक्ष्मजीवों की मृत्यु हो जाती है या उनकी गतिविधियों में कमी आ जाती है जो मृदा की उर्वरा शक्ति को बनाये रखने में सहायक होते हैं। इसके अतिरिक्त जल–जमाव से प्रभावित भूमि में फसलों का विकास अवरुद्ध हो जाता है। अतः जल–जमाव से ग्रसित भूमि खेती के योग्य नहीं होती है। कीटनाशकों के अन्धाधुन्ध प्रयोग से न केवल लक्षित कीटों की मृत्यु होती है अपितु इससे बहुत से परागण को बढ़ावा देने वाले लाभकारी कीट भी नष्ट हो जाते हैं परिणामस्वरूप फसलों की पैदावार प्रभावित होती है। पंजाब में कीट परागित फसल तोरिया की पैदावार में गिरावट दर्ज की गयी है जिसका प्रमुख कारण परागण पहुंचाने वाले कीटों की जनसंख्या में लगातार आ रही गिरावट है।

इसी प्रकार शाकनाशकों के उपयोग से वांछित खर–पतवारों के साथ–साथ उपयोगी औषधीय पौधे भी नष्ट हो जाते हैं।

> देश की लगभग 6 मिलियन हेक्टेयर भूमि जल–जमाव के कारण बेकार भूमि में तब्दील हो चुकी है। कीटनाशकों के अन्धाधुन्ध प्रयोग के कारण कीटों ने प्रतिरोधी क्षमता विकसित कर ली है जिससे कीटों की जनसंख्या में बढ़ोतरी हुई है। देश में 140 से ज्यादा कीटनाशकों का उपयोग होता है और इनकी वार्षिक खपत लगभग 90,000 टन है। कीटनाशकों के अत्यधिक उपयोग के कारण कपास को क्षति पहुंचाने वाले बहुत से कीटों ने प्रतिरोधी क्षमता विकसित कर ली है परिणामस्वरूप देश में कपास की फसल को ज्यादा नुकसान हो रहा है और कर्ज के बोझ से दबे किसान आत्महत्या को मजबूर हैं।

स्वास्थ्य क्षेत्र

सिंचाई के लिए नहरों तथा बांधों के निर्माण तथा धान के कृषि क्षेत्रफल में विस्तार के कारण मच्छरजनित संक्रामक बीमारियों जैसे मलेरिया, मस्तिष्क ज्वर तथा फाइलेरिया के प्रकोप में लगातार वृद्धि हुई है। हरित क्रान्ति के आगमन से मलेरिया के प्रकोप में कई गुना वृद्धि हुई है परिणामस्वरूप आज ग्रामीण क्षेत्रों में मलेरिया प्रमुख स्वास्थ्य समस्या बन गयी है। मस्तिष्क मलेरिया जो मलेरिया का घातक रूप होता है की दर में वृद्धि दर्ज की गयी है। इसके अतिरिक्त फाइलेरिया के रोगियों में भी वृद्धि दर्ज की गयी है। मच्छरजनित मस्तिष्क ज्वर जो आमतौर से बच्चों को प्रभावित करता है। बिहार, उत्तर प्रदेश तथा आन्ध्र प्रदेश जैसे राज्यों में एक प्रमुख स्वास्थ्य समस्या बनता जा रहा है। वर्तमान में इस बीमारी का पूर्वी उत्तर प्रदेश में सर्वाधिक प्रकोप है। पिछले पांच वर्षों में इस क्षेत्र में इस बीमारी से लगभग 2700 लोगों की मृत्यु हुई है, जिनमें ज्यादातर बच्चे हैं।

रासायनिक खाद यूरिया के अत्यधिक प्रयोग के कारण खाद्यान्नों में पोटेशियम की मात्रा कम हो जाती है। पोटेशियम उच्च रक्तचाप को नियन्त्रित करने के साथ–साथ हृदय को भी स्वस्थ रखता है। इसी प्रकार पोटाश के अत्यधिक उपयोग के कारण विटामिन 'सी' तथा विटामिन 'ए' की कमी हो जाती है। विटामिन 'सी' रक्षातन्त्र को मजबूत करती है जबकि विटामिन 'ए' आंख की रोशनी के लिए अति आवश्यक है। अतः रासायनिक खादों से उत्पन्न खाद्यान्नों की पोषकीय गुणवत्ता प्रभावित होती है। आज देश में उच्च रक्तचाप, हृदय सम्बन्धी बीमारियां, श्वास सम्बन्धी बीमारियां, अंधापन

तथा रतौंधी के बढ़ते रोगियों की संख्या हरित क्रान्ति की ही देन है।

देश की शाकाहारी आबादी के लिए दालें प्रोटीन का प्रमुख स्रोत हैं। प्रोटीन के अतिरिक्त दलहनों से हमें खनिज तथा रेशे भी मिलते हैं। हरित क्रान्ति के परिणामस्वरूप गेहूं तथा धान की पैदावार में बढ़ोतरी तो हुई लेकिन दलहन पैदावार में कमी आयी है। जिससे कुपोषण जैसी समस्या पैदा हुई है। पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखण्ड, उड़ीसा तथा छत्तीसगढ़ आदि राज्यों में प्रोटीन की कमी के कारण कुपोषण एक प्रमुख समस्या है। वयस्कों में प्रोटीन कुपोषण के कारण क्षय रोग की संभावना बढ़ जाती है। देश में बढ़ते क्षय रोगियों की संख्या का एक प्रमुख कारण प्रोटीन कुपोषण ही है। हरित क्रान्ति के कारण देश में तिलहन उत्पादन पर भी विपरीत प्रभाव पड़ा है।

कृषि यान्त्रिकरण से बढ़ रही है बेरोजगारी

आर्थिक क्षेत्र

हरित क्रान्ति के कारण देश में आर्थिक असंतुलन की स्थिति पैदा हुई है। पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश तथा तमिलनाडु हरित क्रान्ति से लाभान्वित हुए जबकि अन्य राज्य इस क्रान्ति से बहुत ज्यादा लाभान्वित नहीं हो पाये। बिहार, पश्चिम बंगाल, आसाम, उड़ीसा, मध्य प्रदेश, गुजरात, राजस्थान तथा उत्तरी–पूर्वी राज्यों में हरित क्रान्ति का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। परिणामस्वरूप हरित क्रान्ति से प्रभावित क्षेत्रों में आर्थिक तरक्की हुई जबकि इसके विपरीत इस क्रान्ति से अप्रभावित राज्य पिछड़ेपन के शिकार हुए।

सामाजिक क्षेत्र

हरित क्रान्ति ने देश में सामाजिक असमानता जैसी समस्या को भी जन्म दिया है। बड़े किसान जिनके पास कृषि भूमि ज्यादा थी हरित क्रान्ति के परिणामस्वरूप समृद्ध हुए जबकि छोटे किसान जो कि कीटनाशकों, रासायनिक खादों आदि का वहन नहीं कर सकते थे उन पर हरित क्रान्ति का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। चूंकि छोटे किसान ज्यादा पैदावार नहीं कर सकते थे इसलिए उन्होंने अपनी भूमि बड़े किसानों तथा जमींदारों को पट्टे पर प्रदान कर स्वयं बेरोजगारों की श्रेणी में खड़े हो गये।

कृषि यान्त्रिकरण ने ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी जैसी समस्या को जन्म दिया है। परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में रोजगार की तलाश में बड़े पैमाने पर पलायन हुआ है। शहरी क्षेत्रों में झुग्गी झोंपड़ियां इसी पलायन का परिणाम हैं। झुग्गी झोंपड़ियां शहरी क्षेत्रों में न केवल गंदगी का कारण है अपितु यह शहरी क्षेत्रों में कानून व्यवस्था के लिए भी प्रमुख समस्या हैं। कृषि पैदावार हेतु सिंचाई के लिए भूमिगत जल के अंधाधुन्ध दोहन से भूमिगत जलस्तर में लगातार गिरावट दर्ज की गयी है। हरित क्रान्ति से प्रभावित क्षेत्रों में आज जलस्तर 1980 की तुलना में 5 से 6 मीटर तक गिर गया है। परिणामस्वरूप ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में पीने योग्य पानी की कमी होती जा रही है। पंजाब में भूमिगत जलस्तर में गिरावट एक गंभीर समस्या है जिसका उल्लेख किसान आयोग की रिपोर्ट में किया गया है।

निष्कर्ष

हरित क्रान्ति अपने पार्श्व प्रभावों के कारण आज वरदान से अभिशाप बन चुकी है। जल–प्रदूषण, भूमि ह्रास, जैव–विविधता ह्रास, वन ह्रास, भूमिगत जलस्तर में गिरावट, मच्छरजनित बीमारियों का बढ़ता खतरा, सामाजिक असमानता, क्षेत्रीय असंतुलन आदि समस्यायें हरित क्रान्ति की ही देन है। अतः इस क्रान्ति से होने वाली हानियों ने इसके फायदों को दरकिनार कर दिया है। निःसंदेह आज हरित क्रान्ति देश के लिए लाल क्रान्ति बन चुकी है। अतः आज समय की मांग है कि हम सतत् कृषि को अपनाये जिसमें संसाधनों के संरक्षण के साथ पर्यावरण संरक्षण पर भी विशेष ध्यान दिया जाता है। साथ ही रासायनिक खादों एवं कीटनाशकों का उपयोग आवश्यकता पड़ने पर बहुत कम मात्रा में किया जाता है। सतत् कृषि को अपनाकर हम हरित क्रान्ति के पार्श्व प्रभावों से मुक्ति पा सकते हैं।

(लेखक पारिस्थितिकविद् हैं)
ई–मेल : arvindsingh_bhu@yahoo.com

हरित क्रांति में भुखमरी

भरत कुमार दुबे

खेती –किसानी, पशुपालन, भेड़–बकरी पालन, दुग्ध उत्पादन, मछलीपालन जैसी गतिविधियां भारत के रग–रग में बसी हुई हैं। इन सभी गतिविधियों से कृषि संस्कृति का निर्माण होता है। भारत की कृषि संस्कृति स्वायत्त एवं आत्मनिर्भर रही है। लेकिन औपनिवेशक शासकों ने इस देश के कृषि तंत्र को अपनी सुविधा एवं आवश्यकतानुसार ढाल दिया। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि यह संस्कृति धीरे–धीरे तहस–नहस हो गई और हम पेट भरने के लिए विदेशों पर निर्भर रहने लगे। यही कारण है कि आजादी के बाद खाद्यान्न क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई क्योंकि खाद्यान्न के लिए विदेशों पर निर्भरता अपनी संप्रभुता को गिरवी रखने के समान था।

पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि विकास को प्राथमिकता दी गई। कृषि विकास के लिए अनेक कार्यक्रम शुरू किए गए। कृषि विश्वविद्यालयों की स्थापना हुई और खाद्यान्न, दुग्ध, दलहन, तिलहन, पशु, पशु चारा आदि से संबंधित अनुसंधान केंद्र देश भर में स्थापित किए गए। विदेशों से अधिक उपज देने वाले बीजों को आयात कर उन्हें देशी बीजों के साथ संकरित किया गया। बांध व बिजली घर बने, देश भर में नहरों का जाल बिछाया गया। खरीद, भण्डारण, परिवहन, विपणन का देशव्यापी नेटवर्क बना। किसानों की साख संबंधी आवश्यकताओं के लिए बैंक एवं सहकारी संस्थाओं की स्थापना की गई। इसका परिणाम सकारात्मक रहा। खाद्यान्न उत्पादकता में तेजी से वृद्धि हुई जिससे कुल उत्पादन बढ़ा। अब भारत अपने बल पर देशवासियों की थाली भरने में सक्षम हुआ। 1950–51 से अब तक खाद्यान्न उत्पादन का विवरण इस प्रकार है।

1950 से 2006–07 तक देश में खाद्यान्न का उत्पादन

(करोड़ टन में)

वर्ष	उत्पादन
1950–51	5.65
1960–61	8.20
1970–71	10.84
1980–81	12.96
1990–91	17.64
1999–2000	20.98
2001–01	19.68
2001–02	21.29
2002–03	17.48
2003–04	21.32
2004–05	19.84
2005–06	20.86
2006–07	21.61

स्रोतः आर्थिक सर्वेक्षण – 2007–08

1951 से 2005 के दौरान भारत में प्रति व्यक्ति खाद्यान्नों की निवल उपलब्धता

(ग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिदिन)

वर्ष	चावल	गेहूं	मोटे अनाज	दालें	कुल खाद्यान्न
1951	158.9	65.7	109.6	60.7	394.9
1961	201.1	79.1	119.5	69.0	468.7
1971	192.6	103.6	121.4	51.2	468.8
1981	197.8	128.6	89.9	37.5	454.8
1991	221.7	166.8	80.0	41.6	510.1
2001	190.5	135.8	56.2	30.0	416.2
2002	228.7	166.6	63.4	35.4	494.1
2003	181.4	180.4	46.7	29.1	437.1
2004	195.4	162.2	69.3	35.8	462.7
2005	177.3	154.3	59.4	31.5	422.4

स्रोतः अर्थ एवं सांख्यिकी निदेशालय, कृषि मंत्रालय, भारत सरकार

तालिका से स्पष्ट है कि 1990 के बाद खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि दर लगभग ठहर गई है। 1990 के पूर्व तक जनसंख्या वृद्धि की तुलना में खाद्यान्न उत्पादन की वृद्धि दर अधिक थी लेकिन 1990 के बाद स्थिति उलट गई। इस दौरान जहां उत्पादन में 1.2 प्रतिशत वार्षिक की वृद्धि हुई वहीं जनसंख्या में 1.9 प्रतिशत की दर से। इसका परिणाम यह हुआ कि प्रति व्यक्ति खाद्यान्न की उपलब्धता गिरी।

तालिका से स्पष्ट है कि 1951 से अब तक जहां गेहूं व चावल की खपत में वृद्धि हुई है वहीं मोटे अनाजों और दालों की उपलब्धता में गिरावट आई है। इसका कारण है कि कृषि विकास प्रक्रिया में गेहूं व चावल के योगदान में उल्लेखनीय बढ़ोतरी हुई है जबकि मोटे अनाज और दालों के उत्पादन में लगातार गिरावट आई है। भारत जैसे शाकाहारी प्रधान देश में दालें पोषण सुरक्षा सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं, लेकिन दालों की खपत में गिरावट से कुपोषण की समस्या गंभीर हुई हैं।

प्रति व्यक्ति खाद्यान्नों की उपलब्धता के उपर्युक्त आंकड़े राष्ट्रीय औसत में हैं। इसमें क्षेत्रीय, आर्थिक, वर्गीय स्तर पर व्यापक अंतर पाया जाता हैं। समाज के कमजोर वर्गों विशेषकर महिलाओं, अनुसूचित जातियों, जनजातियों में तो पोषण की स्थिति और भी गंभीर है। इससे स्पष्ट है कि भूखे पेट सोने वालों की संख्या कहीं अधिक है। स्वयं सरकार द्वारा गठित अर्जुन सेनगुप्त समिति के अनुसार देश के 77 प्रतिशत अर्थात् 83.60 करोड़ लोगों की दैनिक आय 8 से 20 रुपये के बीच है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के अनुसार देश में कुपोषित लोगों की संख्या बहुत अधिक है। सर्वे में कहा गया है कि देश में 5 वर्ष से कम उम्र के बच्चे शारीरिक रूप से अविकसित हैं और इसी उम्र के 43 प्रतिशत बच्चों का वजन कम है। देश में 15–49 वर्ष की उम्र के बीच की महिलाओं का बाडी मास इंडेक्स (बी.एम.आई) 18.5 से कम है जो उनमें कुपोषण की गंभीर स्थिति की ओर संकेत करता है। इसी तरह देश में 15–49 वर्ष की उम्र के 34 प्रतिशत पुरुषों का बी.एम.आई. भी 18.5 से कम है और इनमें से आधे से अधिक पुरुष बेहद कुपोषित हैं। यूनेस्को के अनुसार भारत दुनिया का सबसे कुपोषित देश है और यहां प्रतिदिन पौने छह हजार बच्चे मौत के मुंह में चले जाते हैं।

हरित क्रांति के दौर में भारत दालों और खाद्य तेलों का आयात तो करता ही था; अब तो गेहूं, चावल आयात की भी नौबत आ गई। लेकिन वैश्विक स्थितियों में परिवर्तन के कारण अब अनाज, दाल, खाद्य तेल का आयात उतना सरल नहीं रहा। उद्योग और सेवा क्षेत्र पर बल के कारण कृषि क्षेत्र तो पहले से ही उपेक्षित रहा है, अब विश्वव्यापी जलवायु परिवर्तन और खाद्य पदार्थों के जैव ईंधन में उपयोग के कारण कृषि उपज में विश्वव्यापी गिरावट आ रही है। जब विश्व स्तर पर खाद्यान्न संकट की स्थिति पैदा हो गई हो और दुनिया के कई देशों में रोटी के लिए दंगे की स्थिति उत्पन्न हो गई हो उस समय भारत खाद्यान्न का आयात करेगा कहां से?

दूसरे शब्दों में हमें उन कारणों को दूर करना होगा जिनके कारण खाद्यान्न क्षेत्र में आत्मनिर्भरता दिलाने वाली हरित क्रांति लड़खड़ा रही है। इनमें से प्रमुख कारण निम्न हैं–

- हरित क्रान्ति में सबसे बड़ी भूल यह हुई कि खेती के अल्पकालिक लक्ष्यों को प्रमुखता मिली। इसमें मुख्य यह था कि किस प्रकार खेती से अधिक से अधिक लाभ प्राप्त किया जा सकता है। अधिक लाभ लेने के मोह में स्थानिक पारिस्थितिक दशाओं की उपेक्षा करके फसलों को ऊपर से थोपा गया जैसे पंजाब में चावल की खेती। फसलों को थोपने के क्रम में मिट्टी की संरचना, नमी की मात्रा, भूमिगत जल आदि की घोर उपेक्षा की गई। इससे मिट्टी की उर्वरा शक्ति घटती गई। इस कमी को पूरा करने के लिए रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों, रसायनों का प्रयोग बढ़ा। इससे कृषि मित्र जीव–जन्तुओं का विनाश हुआ और मिट्टी, पानी की गुणवत्ता में ह्रास आया।
- हरित क्रांति में उन फसलों को अधिक प्रोत्साहन मिला जो अधिक लाभ दे सकती थी जैसे गेहूं, कपास, गन्ना। इसीलिए इन फसलों का लाभकारी न्यूनतम समर्थन मूल्य निर्धारित हुआ। इसके विपरीत मोटे अनाज, दलहनी, तिलहनी फसलें उपेक्षित रही। इसका दुष्परिणाम यह हुआ कि कृषि कार्य कुछ ही फसलों तक केंद्रित होकर रह गया। इससे फसल चक्र, अंतरफसली कृषि जैसी मिट्टी व पर्यावरण रक्षक प्रणालियां भुला दी गईं।
- प्राकृतिक संसाधनों के क्षरण और उर्वरकों, रसायनों, डीजल–बिजली, सिंचाई आदि की बढ़ती जरूरत के कारण खेती की लागत बढ़ी जिससे किसानों के लिए ऋण लेना अनिवार्य हो गया। संगठित स्रोतों से ऋण न मिलने पर किसान असंगठित स्रोतों (साहूकार–महाजन) से ऊंची ब्याज दर पर ऋण लेने के लिए बाध्य हुए। इस ऋण को समय से न चुका पाने पर उनके ऊपर ऋण भार बढ़ा जो अंततः उनकी आत्महत्या का कारण बना। पिछले एक दशक में डेढ़ लाख से अधिक किसान आत्महत्या कर चुके हैं।
- हरित क्रांति का स्वरूप पूंजी प्रधान रहा। यह उन्हीं क्षेत्रों में अपना कमाल दिखा पाई जहां सिंचाई, डीजल, बिजली, परिवहन, भण्डारण आदि की अनुकूल स्थितियां विद्यमान थीं। पठारी, पहाड़ी, वर्षाधीन क्षेत्र में हरित क्रांति आंशिक रूप से सफल रही है। इन क्षेत्रों में आज भी जीविकोपार्जक कृषि ही प्रचलित है। यही कारण है कि दो–तिहाई वर्षाधीन क्षेत्र का कुल खाद्यान्न उत्पादन में योगदान मात्र 44 प्रतिशत है।

> भारत जैसे कृषि प्रधान और विशाल जनसंख्या वाले देश के लिए भुखमरी एक गंभीर समस्या है। इसे दूर करने के लिए घरेलू उत्पादन में वृद्धि ही एकमात्र उपाय है। लेकिन एक ऐसे समय में जब प्राकृतिक संसाधनों के ह्रास के कारण उत्पादकता में गिरावट आ रही है और बढ़ती लागत के कारण खेती घाटे का सौदा बन चुकी हो तब घरेलू उत्पादन में वृद्धि एक कठिन कार्य है। यह कठिनाई तभी दूर होगी जब हम उत्पादकता में गिरावट और खेती के घाटे का सौदा बनने का तटस्थ विश्लेषण किया जाए।

● 1990 में उदारीकरण की नीतियों के तहत निगम क्षेत्र को प्रमुखता मिली जिससे कृषि क्षेत्र में निवेश में कमी आई। कृषि क्षेत्र में घटते निवेश से सिंचाई, बिजली परियोजनाएं पिछड़ती गई। उदाहरण के लिए 1990 के पूर्व सिंचित क्षेत्र में 3 प्रतिशत वार्षिक की दर से वृद्धि ही रही थी जबकि 1990 के बाद वृद्धि दर घटकर 0.5 प्रतिशत वार्षिक रह गई। इससे मानसून पर निर्भरता बढ़ी और उत्पादकता प्रभावित हुई।

कम पैदावार – बड़ा परिवार

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि भुखमरी के बीज खाद्यान्न संकट से मुक्ति दिलाने वाली हरित क्रांति में ही निहित है। अतः भुखमरी मिटाने और हर थाली तक पर्याप्त आहार पहुंचाने के लिए हरित क्रांति में सुधार आवश्यक है। इस दिशा में निम्न उपाय मील के पत्थर सिद्ध होंगे–

● कृषि के सर्वांगीण विकास के लिए यह अनिवार्य है कि स्थानीय पारिस्थितिक दशाओं (मिट्टी, भूमिगत जल, वर्षा की मात्रा) के आधार पर फसल का चयन किया जाए। रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों का संतुलित प्रयोग हो। हरी खाद के लिए खेती में सनई, ढैंचा की बुवाई कर जुताई करें। गोबर की खाद का अधिकाधिक प्रयोग किया जाए क्योंकि उसमें कृषि मित्र केंचुआ, तितली, कीट आदि रहते हैं।

● जल प्रबंधन को प्राथमिकता देनी होगी। जल संरक्षण के परंपरागत उपायों को हर स्तर पर अपनाया जाए। इससे न केवल भूजल स्तर बढ़ेगा अपितु खेती की लागत घटेगी और किसान वर्षभर फसल उगाने में सक्षम होंगे।

● देश में खाद्य प्रबंधन की कमी के कारण प्रतिवर्ष 10–12 प्रतिशत अनाज और एक–तिहाई फल व सब्जी बरबाद हो जाते हैं। इससे प्रतिवर्ष 55,000 करोड़ रुपये की क्षति होती है। अतः भण्डारण क्षमता में सुधार, खाद्य पदार्थों की आयु बढ़ाने, बरबादी रोकने के लिए सुदृढ़ खाद्य प्रबंधन नीति अपनानी होगी।

● कृषि की विविधता बढ़ाई जाए। बहुफसली खेती, पशुपालन, मत्स्य उत्पादन, दुग्ध उत्पादन जैसी विविध गतिविधियों के संपादित होने से आहार की विविधता बढ़ेगी और कुपोषण, भुखमरी की समस्या का दीर्घकालिक समाधान होगा। इससे किसानों को नियमित आय भी होने लगेगी।

● खेती की एक बड़ी समस्या है उपज का सही मूल्य न मिलना। जब किसान की उपज बाजार में आती है तब दाम गिर जाते हैं और बाद में कई गुना बढ़ जाते हैं। उदाहरण के लिए इस वर्ष में आलू की भरपूर उपज हुई है। शीतगृहों में जगह न होने के कारण आलू के दाम तेजी से गिर रहे हैं और किसानों को अपनी लागत निकालना कठिन हो गया है। अतः सरकार को ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए कि किसानों को उनकी उपज की लाभकारी खरीद की पक्की व्यवस्था हो।

● वर्तमान कृषि तकनीक का स्वरूप पूंजी प्रधान रहा है। यही कारण है कि इससे न तो ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के पर्याप्त अवसर सृजित हुए और न ही लघु व सीमांत किसान उसे बड़े पैमाने पर अपना सके। अतः ऐसी कम लागत वाली कृषि तकनीक के विकास की जरूरत है जिसे लघु व सीमांत किसान बड़े पैमाने पर अपना सकें और जिसमें स्थानीय स्तर पर उपलब्ध संसाधनों का प्रयोग हो।

● किसानों को समय पर साख की उपलब्धता एक बड़ी समस्या है। यह समस्या तभी दूर होगी जब उन्हें आसान ब्याज दरों पर समय से साख उपलब्ध कराया जाए। इसके लिए बैंकिंग प्रक्रियाओं का सरलीकरण और सहकारी साख संस्थाओं को सुदृढ़ किया जाए।

सतलुज, गंगा, यमुना के मैदान और कृष्णा, गोदावरी, कावेरी के डेल्टा की उर्वरा भूमि में इतनी क्षमता है कि वह पूरे देश की भुखमरी मिटा सके। इस वर्ष (2008) रिकार्ड गेहूं उत्पादन से यह बात सिद्ध हो जाती है। देश की भुखमरी तभी दूर होगी जब गेहूं उत्पादन में अर्जित की गई सफलता ज्वार, बाजरा, मक्का, चावल, दलहनी व तिलहनी फसलों में दुहराई जाए।

(लेखक राजकोष समन्वय कार्यालय, महालेखाकार (लेखा एवं हलदारी) इलाहाबाद में अनुभाग अधिकारी हैं।)
ई–मेल : bdubey01900@yahoo.com

नई कृषि तकनीक और हरित-क्रान्ति

अखिलेश आर्येन्दु

कृषि को बढ़ावा देने और किसानों की आय बढ़ाने के मद्देनज़र भारत सरकार किसानों को नई तकनीक अपनाने पर जोर दे रही है। यह इसलिए आवश्यक है कि भारत में प्रति हेक्टेयर पैदावार विश्व के दूसरे देशों से बहुत कम है। इसका सबसे बड़ा कारण नई वैज्ञानिक तकनीकों को न अपनाना और कृषि का पुराना तौर–तरीका अपनाए रहना है। खाद्यान्न के क्षेत्र में भारत के आत्मनिर्भर होने के बावजूद समय–समय पर सरकार को बाहर से अनाज का आयात करना पड़ता है। खासकर तिहलन और दलहन की कमी को पूरा करने के लिए। आयात जिन अनाजों का करना आवश्यक है उनकी पैदावार बढ़ाकर भरपाई की जा सकती है। लेकिन समस्या इससे पूरी तरह समाप्त हो जाएगी, कहना मुश्किल है।

संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट में एक बहुत ही व्यवहारिक बात पर ध्यान दिलाया गया है। वह है नई तकनीकों को अपनाते हुए कृषि के पारम्परिक तौर–तरीकों, प्राकृतिक खाद का उपयोग, कृषि विज्ञान को अपनाने, पारंपरिक बीज और संसाधनों की रक्षा करना। यह इसलिए कि इससे पर्यावरण को सुरक्षित रखने में गजब का सहयोग मिलता है। इस रिपोर्ट से यह मालूम होता है कि भारतीय कृषि में जो बदलाव मूल रूप से किए जाने की आवश्यकता बताई जा रही है उसे बिना सोचे–समझे नहीं करना चाहिए। यह इसलिए कि आधुनिक रसायनों और आधुनिक यंत्रों के बलबूते पर की जाने वाली खेती से पैदावार तो दस से पच्चीस गुना तक अधिक होती है लेकिन पर्यावरण के दृष्टिकोण से यह किसी भी तरह निरापद नहीं है। सोचना यह है कि पारम्परिक कृषि के जरिए कैसे नई तकनीक से उत्पादन को अत्यधिक बढ़ाया जा सकता है।

इस समय भारतीय कृषि में एक स्थिरता का दौर चल रहा है। योजना आयोग के अनुसार पिछले तीन दशकों में कृषि–क्षेत्र में तकनीकी और विस्तारपरक मंदी जारी है। पिछले कई वर्षों से कृषि–क्षेत्र का न तो विस्तार हुआ और न ही किसी नई तकनीक का आगमन ही हुआ। इससे हरित क्रान्ति की प्रक्रिया में मंदी आई। हरित क्रान्ति के क्षेत्र पंजाब और उत्तर प्रदेश की स्थिति अब पहले जैसी नहीं है। लागत और श्रम की अपेक्षा आय में कमी आई है। इसलिए ऐसे में नई तकनीक को अपनाना आवश्यक हो गया है। आय बढ़ाने का जो दूसरा उपाय सुझाया जा रहा है वह जैविक खेती को अपनाना एवं बढ़ावा देना। यह सुझाव इंटरनेशनल फंड फॉर एग्रीकल्चर डवलपमेंट (आईएफएडी) ने दिया है। इस एजेंसी के अनुसार जैविक खेती और बीजों के पुनर्जनन को अपनाकर आय को बढ़ाया जा सकता है। ऐसा एक प्रयोग महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र में किया गया। यह एजेंसी अब बड़े पैमाने पर जैविक खेती और बीजों के पुनर्जनन को बढ़ावा देने के लिए काम कर रही है। इस नए प्रोजेक्ट के तहत किसानों को न केवल किसानी के पुराने ढंग सिखाए जाएंगे, बल्कि अपने माल की बिक्री की सभी बारीकियों से भी रूबरू कराया जाएगा।

> संयुक्त राष्ट्र संघ की ताजा रिपोर्ट के अनुसार विश्व में अनाज का भण्डार खपत की अपेक्षा कम है, इसलिए सभी देशों को अनाज की पैदावार और अधिक बढ़ाना आवश्यक है। रिपोर्ट के अनुसार भारत और चीन में बढ़ती मांग के कारण धान, गेहूं एवं मक्के की कीमतों में वृद्धि होने की सम्भावना है। मक्का और सोयाबीन का उपयोग जैविक ईंधन के रूप में भी होने लगा है, इससे इन अनाजों का महंगा होना लाजमी है। रिपोर्ट में कहा गया है कि पृथ्वी की 35 प्रतिशत भूमि की गुणवत्ता में कृषि गतिविधियों के कारण कमी आ गई है।

कृषि भारत के 60 प्रतिशत लोगों की जीविका का साधन है। लेकिन किसान और उसका परिवार कभी अपने इस परम्परागत जीवनयापन के साधन से संतुष्ट नहीं दिखाई पड़ता है। इसका कारण एक नहीं, कई हैं। लेकिन सबसे बड़ा कारण यह बताया जाता है कि इसमें लागत और श्रम की अपेक्षा आय उतनी नहीं होती कि किसान का पूरा परिवार अपनी सारी आवश्यकताएं पूरी कर सके। एक अभाव हमेशा किसान के परिवार में रहता है। यह अभाव कैसे दूर होगा, इस पर विचार करना आवश्यक है।

देश में उद्योगों और कल–कारखानों के बढ़ने के कारण जलवायु में जबरदस्त परिवर्तन आया है। इसके कारण वर्षा अधिक और एकदम न होने से बाढ़ और अकाल पड़ने की समस्या आम होती जा रही है। इसके अलावा असमय बरसात, बाढ़, सूखा और अधिक गर्मी या ठंढक, तूफान और आंधी आना आम बात हो गई है। जल का अधिक दोहन भी उद्योगों के कारण हो रहा है। इससे किसानों को सबसे अधिक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। देश के अधिकांश गांवों में पीने के पानी की जबरदस्त किल्लत हो रही है और खेती के लिए बहुत बड़ी समस्या पैदा हो

गई है। देश के 95 प्रतिशत कुओं का जलस्तर पिछले 25 सालों में 3 फीट से लेकर 15 फीट तक नीचे चला गया है। इससे कृषि पर जबरदस्त असर पड़ा है। नई तकनीक से इस समस्या से काफी हद तक निपटा जा सकता है। पर्यावरणीय समस्या से भी नई तकनीक से कुछ हद तक निपटा जा सकता है। इसी के साथ ही साथ यह भी जानना आवश्यक है कि ऋतु परिवर्तन के साथ कैसे और किस फसल की पैदावार ली जानी चाहिए। बहुत कम पानी से किस ऋतु में कौन–सी बागवानी लगाना चाहिए यह जानना आवश्यक है। किस क्षेत्र में कौन–सी फसल और फल देने वाले वृक्ष को रोपना चाहिए, इसकी भी जानकारी नई तकनीक से अधिक सहज हो जाती है। उदाहरण के तौर पर बाढ़ वाले क्षेत्र में धान की नई किस्म उगाई जा सकती है। जहां पर उद्योग और कारखाने अधिक कार्बनडाईआक्साइड उत्सर्जित कर रहे हों वहां पर केले और नींबू की फसल ली जा सकती है। इसी तरह अकाल वाले क्षेत्र में चना, मसूर, अरहर और दूसरी बहुत कम पानी लेने वाली फसलें उगाई जा सकतीं है। लेकिन फसलों को कीटाणुओं से बचाने के लिए नई उच्च तकनीक को भी अपनाना होगा। बिना इसके न तो अधिक पैदावार बढ़ाई जा सकती है और न ही दूसरी समस्याओं को ही दूर किया जा सकता है।

कृषि के जानकारों के अनुसार नई हरित क्रान्ति को गति देने के लिए नई हरित कृषि और जैविक प्रणाली को अपनाने की आवश्यकता है। ये दोनों भारतीय कृषि को नई दिशा दे सकते हैं। जैविक खेती भारतीय कृषकों के लिए निरापद मानी जा रही है। यह इसलिए कि इसमें रासायनिक कीटनाशकों और उर्वरकों का प्रयोग बहुत ही कम किया जाता है। पर्यावरण के लिए यह निरापद है। इसी तरह हरित कृषि में भी कीट प्रबंधन, पौष्टिक तत्त्वों और अच्छी किस्म की प्रजातियों का उपयोग किया जाता है। इन दोनों विधियों से देश का किसान समृद्ध और सुखी बन सकता है। देश की बायो सुरक्षा, उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य और पर्यावरण की सुरक्षा की गारंटी इससे ही मिल सकती है। गांवों में कृषि के अलावा बागवानी और कुटीर उद्योग आय के साधन होते हैं। नई तकनीक से कुटीर उद्योग को भी बढ़ावा दिया जा सकता है। उदाहरण के तौर पर गांवों में महिलाएं डलिया, हाथ–पंखा झाड़ू, गुदड़ी, कथरी, मचिया और दूसरी अनेक वस्तुएं घरों के कार्यों से समय निकालकर नई तकनीक से अधिक मात्रा में और अधिक सुन्दर बनाई जा सकती हैं।

उत्तर प्रदेश के वाराणसी के 90 गांवों की महिलाओं ने सामूहिक खेती के माध्यम से जो आत्मनिर्भरता हासिल की है। वह देश की करोड़ों महिलाओं के लिए प्रेरक हो सकता है। यह सामूहिक खेती नई तकनीक से अधिक उत्पादन दे रही है। वाराणसी जनपद के 90 गांव की 4500 महिलाओं ने 'स्वयं सहायता समूह के माध्यम से सामूहिक खेती करना प्रारम्भ किया है। इससे इनमें आत्मविश्वास तो बढ़ा ही है, इनकी आजीविका का भी माध्यम बन गया है। 'स्वयं सहायता समूह' बनाकर ये महिलाएं केवल आत्मनिर्भर ही नहीं हुई हैं बल्कि दूसरी महिलाओं के लिए प्रेरणा का स्रोत भी बन गईं। सबसे दिलचस्प बात यह है कि 90 गांवों की इन महिलाओं ने खेत किराए पर लेकर यह करिश्मा कर दिखाया है। किराए पर लिए खेतों में अमरूद, आलू, पपीता, धान, गेहूं और फूल की खेती करके आत्मनिर्भर बनी हैं। महिलाएं सामूहिक खेती में 'समूह' में ही सारा कार्य करती हैं। खेतों में जो पैदा हुआ है उसे आपस में बांट लेती हैं। साल के अन्त में जो बच जाता है उसे वे 'स्वयं सहायता समूह' के खाते में डाल देती हैं।

जानकारी के अनुसार महिलाएं इस सामूहिक खेती से बहुत खुश हैं। यह इसलिए कि उन्हें किसी के सामने हाथ नहीं फैलाना पड़ता है। महाजनों से उन्हें ब्याज भी नहीं लेना पड़ता। ऐसे प्रयोगों से ऐसे अनेक गांव भी खुशहाल हो सकते हैं जो आमदनी के मामले में बहुत पीछे हैं।

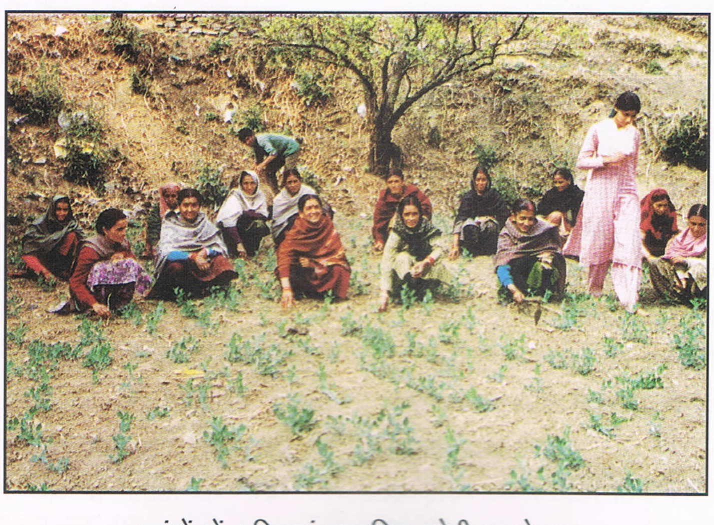

गांवों में महिलाएं सामूहिक खेती करते हुए

कृषि कार्यों में पालतू पशु का स्थान आज भी सर्वोपरि है। पशुधन के बिना गांव के रहने वालों का कोई भी कार्य सफल नहीं हो सकता है। गांव के हर परिवार में आज भी दुधारू और कृषि में काम आने वाले पशु पाले ही जाते हैं। अर्थात् कृषि की रीढ़ पशु हैं। इन पशुओं से अभी तक किसान जितना लाभ लेते रहे हैं उससे बीस गुना अधिक लाभ लिया जा सकता है। लेकिन यह तभी सम्भव है

जब उच्च तकनीक का प्रयोग कर इनके रखरखाव और सुरक्षा की बात भी जोड़ी जाए। महिलाएं इस कार्य में पहले से भी अधिक योगदान कर सकती हैं। मतलब गांवों में पशुधन आय का बहुत बड़ा साधन बन सकता है। किसान पशुओं को अपनी संतान की तरह पालता है। पशु भी किसान को उसके स्वार्थ को पूरा करने में कभी कोताही नहीं बरतता है। पशु मरते दम तक किसान को पंचामृत (दूध, दही गोरस, घी और नवनीत) गोबर, मूत्र, चमड़ा और खाद देकर उसे सम्पन्न बनाने में योगदान देता है लेकिन आज की महंगाई के युग में इससे परिवार की सभी आवश्यकताएं पूरी नहीं हो पाती हैं इसलिए नई तकनीक अपनाकर उन्हीं जानवरों से चार गुना लाभ लिया जा सकता है जिनसे बहुत कम आय होती थी। महिलाएं इसे एक उद्योग के रूप में भी विकसित कर अपने पैरों पर खड़ी होने के रूप में भी अपना सकती हैं। बस इन्हें शिक्षित कर इनमें इच्छा–शक्ति जगाने की आवश्यकता है।

कृषि कार्य पुरुष और महिलाएं दोनों करते हैं। लेकिन नई तकनीक की जानकारी पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं को बहुत कम है। महिलाओं को तकनीक प्रचार की मुख्य धारा में शामिल करके गांव–गांव में नई तकनीक के प्रचार–प्रसार में तेजी लाई जा सकती है। भारतीय कृषि इसलिए पिछड़ी है कि गांवों में महिलाओं की उतनी भूमिका नहीं है जितनी होनी चाहिए। इसलिए कृषि तकनीक प्रचार–प्रसार का आन्दोलन चलाया जाना चाहिए। एक बात जो जानने की है वह यह है कि जिस कार्य या क्षेत्र में महिलाएं बढ़–चढ़कर हिस्सा ले रही हैं वहां नई रोशनी और जोश एवं नव–विकास स्पष्ट दिखाई पड़ता है।

> आज महिलाएं अपनी कार्य क्षमता से राज्यों की राज्यपाल और राष्ट्रपति जैसे सर्वोच्च पद को सुशोभित कर रही हैं। फिर क्या कारण है कि गांवों में वे अपना पूरा योगदान नहीं दे पातीं? गांवों में महिलाएं अपने परिश्रम और सूझबूझ से कृषि को वह ऊंचाई दे सकती हैं जिसकी हम शायद ही कभी कल्पना करते हों। इसलिए गांव के पुरुषों को भी इस तरफ ध्यान देना चाहिए। जिस प्रकार से पंचायती राज के माध्यम से गांव–गांव की महिलाओं को आगे बढ़ने का अवसर प्रदान किया गया, उसी प्रकार से कृषि तकनीक की शिक्षा और जानकारी देकर उन्हें पूर्णतः आत्मनिर्भर बनाने की दिशा में नई पहल की जा सकती है।

गांवों में आमतौर से यह धारणा है कि लड़कियों को उच्च शिक्षा दिलाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि उन्हें अन्ततः चूल्हा–चौका ही करना है। पराया धन मानने की अवधारणा के कारण भी लड़कियों को उच्च तकनीक या ज्ञान देने की पहल नहीं की जाती है। इस कारण से उनमें वह जागरुकता नहीं आ पाती जिनकी वे हकदार मानी जाती हैं। गांवों में उच्च तकनीक द्वारा कृषि को बढ़ावा न मिलने का एक बहुत बड़ा कारण स्त्री–वर्ग का शिक्षित न होना भी है। कृषि विज्ञान की पढ़ाई पर आमतौर से पुरुषों का ही एकाधिकार है। सरकार यदि गांवों की महिलाओं को उच्च कृषि तकनीक की शिक्षा देने की कार्य योजना बनाए और हर गांव की लड़कियों और महिलाओं को कृषि विज्ञान की शिक्षा निःशुल्क उपलब्ध कराए तो पूरे देश में नई हरित क्रान्ति आ सकती है। इससे जहां स्त्री–वर्ग में शिक्षा के प्रति नई जागरुकता आएगी वहीं पर उन्हें नई–नई तकनीकों की भी जानकारी होगी। श्रम की उन्हें वाजिब कीमत भी प्राप्त हो सकेगी। शोषण, जुल्म और प्रताड़ना से भी काफी हद तक मुक्ति मिलेगी।

पिछले सालों में केन्द्र सरकार ने गांवों के विकास के लिए अनेक कदम उठाए और नई योजनाओं के द्वारा पिछड़े किसानों को नए अवसर प्रदान करने की पहल की। सरकार की योजनाओं को अशिक्षित महिलाएं नहीं समझ पाती हैं। इसलिए सरकार ने महिलाओं को शिक्षित करने के लिए अभियान चलाया। इसका लाभ भी धीरे–धीरे दिखाई पड़ने लगा है।

महिलाएं नवीन तकनीक को पुरुषों की अपेक्षा जल्दी समाहित कर लेती हैं। यह इसलिए कि उनमें नई चीज सीखने और करने की रुचि और जोश पुरुषों की अपेक्षा अधिक होता है। गांव–गांव में महिला वैज्ञानिक तैयार करने में एक प्रयोग किया जा सकता है। गांव से जब कोई स्त्री वैज्ञानिक बनकर निकलेगी तो निश्चित है वह अधिक कारगर रूप से गांवों के पिछड़ेपन को दूर करने में अपना योगदान कर सकेगी।

साधारण रूप से गांवों में महिलाएं अपनी क्षमता का एक प्रतिशत भी उपयोग नहीं कर पाती हैं। ऐसे में कृषि क्षेत्र में उनकी भागीदारी कैसे अधिकाधिक हो सके यह एक बड़ा सवाल है। गांवों में कृषि तकनीक अपनाकर महिलाएं अनाज के अलावा औषधीय खेती को अपनी आय का माध्यम बना सकती हैं। यह सामूहिक खेती जैसे भी विकसित किया जा सकता है। इन नए तरीकों से एक जो सबसे बड़ा फायदा होगा वह है गांवों से शहरों की ओर बढ़ता पलायन रुकेगा और गांवों का सिरे से पिछड़ापन दूर होगा। किसानों द्वारा की जा रही आत्महत्या भी रुकेगी। मतलब नई तकनीक और हरित क्रान्ति के रास्ते पर चलकर देश की 65 प्रतिशत आबादी खुशहाल हो सकती है।

देश में 1993 से अब तक कृषि के विकास के लिए सरकार ने जो योजनाएं बनाईं, जो अभियान चलाए वे तकनीकी

ज्ञान न होने से उतना सफल नहीं हुआ जितना होना चाहिए। दूसरा कदम केन्द्र सरकारों द्वारा कृषि के क्षेत्र में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को पैठ बनाने की खुली छूट देना है। इससे कम्पनियों को तो खूब लाभ हुआ, लेकिन किसान कर्जों से लद गए। आत्महत्या का दौर 1993 के बाद से ही शुरू हुआ था। सरकार ने अमेरिका और आस्ट्रेलिया से नया गेहूं मंगवाया वह भारतीय किसानों के लिए कोई फायदा न दे सका। ये गेहूं देशी गेहूं की जगह बोने की सरकार ने किसानों को सलाह दी। लेकिन इससे किसानों की आय में कोई वृद्धि नहीं हुई। बल्कि अधिक कीमत देकर खरीदने के कारण नुकसान ही उठाना ही पड़ा। सरकार को इस ओर अवश्य ध्यान देना चाहिए। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का एक उद्देश्य होता है अधिकाधिक लाभ अर्जित करना। इससे उपभोक्ता के ऊपर क्या प्रभाव पड़ रहा है उसके बारे में वे सोचती ही नहीं। भारतीय कृषि वैज्ञानिकों की राय भी ऐसी ही है। प्रसिद्ध कृषि विश्लेषक डॉ. देविंदर शर्मा का मानना है कि कृषि के क्षेत्र में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को निवेश की अनुमति देने का मतलब भारतीय कृषि का विनाश करने के समान हैं। मतलब परंपरागत कृषि को ही नई तकनीक के माध्यम से करने की हिमायत करने वाले एक नहीं अनेक भारतीय कृषि विशेषज्ञ हैं।

वैसे सरकार यह कभी नहीं चाहेगी कि भारतीय किसान विदेशी अनाजों के मुहताज हो जाएं। बहुराष्ट्रीय कम्पनियां जो नई तकनीक कृषि के क्षेत्र में लाने की बात कर रही हैं उस पर विचार करने में कोई बुराई नहीं है। लेकिन कृषि देश की सबसे पुरानी संस्कृति के रूप में हमारे जीवन का अंग रही है। कृषि को बढ़ाने का मतलब अपनी संस्कृति को बढ़ावा देना। लेकिन बढ़ावा इस तरह देना चाहिए कि यह निरापद हो। संस्कृति, जीवनशैली और सेहत के साथ समझौता करके कोई भी विकास अन्ततः विनाशकारी ही साबित हो सकता है।

तकनीक को किसान जितना अधिक उपयोग करेंगे उतना ही उनके उत्पाद का अधिक मूल्य निर्धारित होगा। बुवाई, सिंचाई, देखभाल, खरपतवार की निराई, फसल पक जाने पर उसकी कटाई, भण्डारण जितना श्रमश्राध्य और अधिक लागत वाला लगता है, तकनीक से जोड़ देने पर उतना ही सहज, सरल और आरामदायक हो जाता है। कृषि वैज्ञानिकों के अनुसार अधिकांश कृषक मिट्टी की गुणवत्ता बढ़ाने और उत्पादकता बढ़ाने के बारे में जानते ही नहीं हैं। मिट्टी की जांच कराने से उत्पादकता पर क्या प्रभाव पड़ता है, उन्हें पता ही नहीं होता है। इसके अलावा फसलों को रोगों से बचाने के लिए कौन से कदम उठाए जाने चाहिए, यह भी नहीं जानते हैं। इसलिए भारतीय कृषि दूसरे देशों की कृषि की अपेक्षा बहुत पीछे है। किस कीटनाशक का प्रयोग करना चाहिए और किनका नहीं, यह भी उन्हें नहीं मालूम होता है। यह सब नई तकनीक के माध्यम से मालूम हो सकता है।

पशुओं के चारे की संकर खेती

भारतीय कृषि 65 प्रतिशत कुदरत की कृपा पर आधारित है। इस क्षेत्र के किसान साल में मुश्किल से दो फसलें ही ले पाते हैं। जबकि तकनीक का प्रयोगकर अर्थात वर्षा के जल का खेत के किसी कोने या तालाब में भण्डारण कर बहुचक्रिय फसल ली जा सकती है। मानसून आधारित खेती को अत्यधिक लाभवाली कैसे बनाया जा सके, इस पर सरकार और किसान दोनों को विचार करने की आवश्यकता है। अब बायोइंडस्ट्रियल वॉटर शेड कृषि की बात की जाने लगी है। सरकार को चाहिए किसानों को इसके बारे में बताए। साथ ही साथ मानसूनी बरसात के बारे में नई जानकारी देकर वैकल्पिक व्यवस्थाएं करने के लिए भी सचेत कर किसानों को होने वाली हानियों से बचाया जा सकता है। नई तकनीक का जैसा प्रयोग और उपयोग उद्योगों, उत्पादकता और बाजारीकरण में किया जा रहा है, वैसा ही कृषि को लाभकारी बनाने में किया जा सकता है। इसमें केवल सरकार या केवल किसान कुछ नहीं कर सकते, बल्कि कृषि से जुड़े हर व्यक्ति को इस बारे में सोचना होगा।

आने वाले समय में बाजारीकरण और निजीकरण तेजी के साथ बढ़ेगा, ऐसे में किसानों को नए जमाने के साथ नई तकनीक अपनाने के अलावा और कोई रास्ता नहीं है।

(लेखक कृषि संस्कृति के विशेषज्ञ और साहित्यकार हैं।)
ई–मेल : akhilesh.aryendu@gmail.com

विश्वव्यापी खाद्यान्न संकट

डॉ. ओ.पी. शर्मा

आर्थिक विकास के साथ–साथ मानव की आवश्यकताएं अनंत होती गई, मगर 'रोटी' सदैव मनुष्य की पहली प्राथमिकता रही। भारतीय संस्कृति में रोटी की महत्ता 'पहले पेट पूजा फिर काम दूजा' से चरितार्थ होती है। वैसे तो आवश्यकता आविष्कार की जननी है लेकिन अनेक बार इसकी पूर्ति में समाज के लिए आवश्यक उत्पादों की बलि चढ़ा दी जाती है। हाल ही के वर्षों में विकसित देशों ने खाद्यान्न की तुलना में ईंधन को प्राथमिकता दी। खनिज तेल की कीमतों में उछाल आया तो उन्होंने जैव ईंधन को विकल्प के रूप में ढूंढ लिया। खाद्यान्न उत्पादन के इसमें उपयोग से अब खाद्यान्न संकट आ खड़ा हुआ है। आज खाद्यान्न की कमी और इसकी बढ़ी हुई कीमतों से विश्व में बावेला मचा हुआ है। विकासशील देशों में खाद्यान्न का अभाव नई बात नहीं है। वे खाद्यान्न समस्या से जूझते रहते हैं। मगर खाद्यान्न को लेकर आज के उपजे संकट से विकसित देश अधिक चिंतित हो उठे हैं।

कई खाद्यान्न उत्पादक देशों के द्वारा निर्यात पर प्रतिबंध लगा देने पर जापान ने इस मामले को विश्व व्यापार संगठन में उठाने की घोषणा की। खाद्यान्न संकट टोकियो से लेकर सेनफ्रांसिस्को और फिलीपीन्स से लेकर हेती तक पसर चुका है। बचे हुए देशों के भी इसकी चपेट में आने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है। कुल मिलाकर खाद्यान्न संकट विश्वव्यापी हो गया है।

खाद्यान्न संकट के गहराने से अमरीका की राजधानी वाशिंगटन में बहुत से आउटलेट्स चावल की राशनिंग प्रारंभ कर चुके हैं। वहां गेहूं के आटे की कीमत आसमान छू चुकी है। भंडारों में मक्खन नहीं है। भोजन पकाने के लिए गैस की अबाध आपूर्ति नहीं है। अमरीका की सबसे बड़ी वेयरहाउसिंग श्रृंखला वाल मार्ट का सेम क्लब और प्रतिस्पर्धी कोस्टको ने अप्रैल 2008 से चावल की खरीददारी पर सीमा लागू कर दी। इस बीच जापान, जो कि विश्व का सबसे बड़ा खाद्यान्न आयातक देश है, को खाद्यान्न की कीमतों में तेजी के चलते तथा निर्यातक देशों द्वारा खाद्यान्न आपूर्ति में कमी करने के कारण खाद्यान्न के वार्षिक बजट में वृद्धि करनी पड़ी है।

खाद्यान्न संकट की बौखलाहट के बीच विकसित देश इसके लिए विकासशील देशों को जिम्मेदार ठहरा रहे हैं। अप्रैल 2008 में अमरीकी विदेशी सचिव कोंडालिजा राइस ने भारत तथा चीन के लोगों को पेटू कहते हुए कहा कि इन देशों में खाद्यान्न की खपत ज्यादा है। वहां के राष्ट्रपति जार्ज बुश ने भी खाद्यान्न संकट के लिए भारत के 35 करोड़ मध्यम वर्ग को जिम्मेदार ठहराते हुए कहा कि भारत में मध्यम वर्ग समृद्धि के कारण बेहतर खाद्यान्न की मांग करने लगे हैं। ब्राजील के प्रधानमंत्री भी खाद्यान्न संकट के लिए भारत को उत्तरदायी मानते हैं। हकीकत में देखा जाए तो खाद्यान्न संकट के लिए अमरीका और ब्राजील ही सबसे ज्यादा जिम्मेदार हैं क्योंकि ये देश जैव ईंधन के उत्पादन के लिए अधिक खाद्यान्न का उपयोग करते हैं। खाद्यान्न की प्रति व्यक्ति खपत भारत में 200 किलोग्राम तथा चीन में 325 किलोग्राम की तुलना में अमरीका में 1230 किलोग्राम है। विश्व के अनेक देशों में खाद्यान्न को लेकर त्राहि–त्राहि मच रही है। उधर अमरीका में खाद्यान्न को मांसाहार के लिए पशुओं को खिलाया जा रहा है। प्रकृति ने खाद्यान्न को मानव के लिए बनाया है। इस नाते खाद्यान्न पर पहला अधिकार मानव का है। पशुओं और अन्य जीव–जंतुओं के लिए प्रकृति ने घास और अन्य आकर्षक वनस्पति उपहार में दिए हैं। मनुष्य दुर्लभ जीव–जंतुओं को मारकर तथा वनस्पति और जंगलों को काटकर प्रकृति के साथ खिलवाड़ कर रहा है। इससे पारिस्थितिकी संतुलन बिगड़ गया है। पूर्व की सुनामी को लोग अभी भूले भी नहीं कि आज (मई 2008) म्यांमार में नरगिस ने असंख्य लोगों का जीवन लील लिया है।

विश्व में तेजी से बढ़ती जनसंख्या को कितने खाद्यान्न की आवश्यकता है। इस बात को लेकर किसी को चिंता नहीं है। वर्ल्ड डेवलपमेंट रिपोर्ट 2006 के अनुसार विश्व की जनसंख्या 2004 में 6.3 अरब थी। यह 2000–04 के बीच 1.2 प्रतिशत औसत वार्षिक वृद्धि से बढ़ी। विश्व जनसंख्या घनत्व 49 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। संयुक्त राष्ट्र के आंकलन के अनुसार विश्व जनसंख्या 2025 में 8 अरब होगी। संयुक्त राष्ट्र संघ के खाद्य और कृषि संगठन (एफएओ) के अनुसार 2008–09 के अंत तक विश्व का कुल खाद्यान्न भंडार वर्ष 1982 के खाद्यान्न भंडार से भी कम रह जायेगा। विश्व में 2005–07 के बीच चावल, गेहूं और मक्के की कीमत लगभग 180 प्रतिशत बढ़ चुकी है। विश्व में गेहूं का निर्यात करने वाले देशों में अमरीका, कनाड़ा, रूस, कजाकिस्तान, चीन, आस्ट्रेलिया, अर्जेन्टीना, पाकिस्तान, उक्रेन आदि हैं। इसमें से कई देशों तथा अन्य ने यथा रूस, उज्बेकिस्तान, चीन, पाकिस्तान, भारत, बांग्लादेश, कम्बोडिया, श्रीलंका, बेलारूस, क्रोएशिया, सूडान, इथोपिया, तंजानिया आदि ने खाद्यान्न निर्यात पर प्रतिबंध और अंकुश लगा दिया है।

विश्व में खाद्यान्न का जो संकट उभरा है उसका एक बड़ा कारण विश्व स्तर पर कृषि की हुई उपेक्षा भी है। आज कृषि प्रधान

अर्थव्यवस्था वाले देशों की संख्या कम रह गई है। पिछले दशकों में जो देश कृषि प्रधान कहलाते थे उनके सकल घरेलू उत्पाद में कृषि तथा संबद्ध क्षेत्र का योगदान बहुत घट गया है। कृषि प्रधान देशों में जब कृषि ही पिछड़ गई तो एक–न–एक दिन खाद्यान्न संकट तो आना ही था। हालांकि विश्व में आज (2004) भी अनेक देश ऐसे हैं जहां के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का भाग 40 प्रतिशत से अधिक है। इन देशों में बुरूंडी, केमरून, सेन्ट्रल अफ्रीकन रिपब्लिक, चाड, कोंगो डेमोक्रेटिक रिपब्लिक, इथोपिया, नाईजर, खांडा, सिरालेन, तंजानिया, टोगो सम्मिलित हैं। ये सभी देश आर्थिक विकास के क्षेत्र में बहुत कमजोर हैं। कहने को तो ये सभी देश कृषि प्रधान हैं, किंतु ये विश्व के खाद्यान्न संकट के समाधान में भूमिका निभाने की स्थिति में नहीं हैं। पिछड़े हुए देशों में खाद्यान्न संकट के कारण असंतोष ज्यादा है। अफ्रीका महाद्वीप के हेती में अकाल की स्थिति में लोग मिट्टी के बिस्कुट खाने को मजबूर हैं।

भारत विश्व के खाद्यान्न संकट के समाधान में बड़ी भूमिका निभा सकता है। मगर वर्तमान में यहां कि कृषि अर्थव्यवस्था खराब स्थिति में पहुंच चुकी है। कृषि के प्रति लोगों में अनाकर्षण की भावना पनपती जा रही है। यहां की कृषि की स्थिति पर बारीकी से नजर डालने पर ऐसा लगता है जैसे कृषि से जुड़े हुए लोग जल्दी से जल्दी इससे छुटकारा पाना चाहते हो। देश में बहुतेरे लोग कृषि से मजबूरी से ही जुड़े हुए हैं। वे बेहतर विकल्प मिलने की स्थिति में इसे छोड़ने को तत्पर बैठे हैं। इसके पीछे कारणों में झांके तो पाते हैं कि कृषि सभी के लिए लाभ का सौदा नहीं रहा है। यही कारण है कि भारत की अर्थव्यवस्था में कृषि की वृद्धि दर 2007–08 में 2.6 प्रतिशत तक गिर गई। खाद्यान्न उत्पादन वृद्धि 2004–05 में ऋणात्मक 7 प्रतिशत तथा 2007–08 में केवल 0.9 प्रतिशत थी। भारत में कृषि के पिछड़ने से सकल घरेलू उत्पाद में इस क्षेत्र की भूमिका नई श्रृंखला 1999–2000 की कीमतों पर 2006–07 में केवल 20.54 प्रतिशत (त्वरित अनुमान) रह गई। उल्लेखनीय है सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान 1999–2000 में 27.32 प्रतिशत था। ऐसी स्थिति में कृषि भारत के एक अरब से अधिक लोगों का खाद्यान्न कैसे मुहैया करा सकेगी? चिंताप्रद बात तो यह है कि भारत खाद्यान्न से संबंधित अनेक महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों का सदस्य है। इनमें अन्तर्राष्ट्रीय खाद्यान्न परिषद, संयुक्त राष्ट्र संघ का खाद्य और कृषि संगठन (एफएओ,) विश्व खाद्य सुरक्षा समिति, अन्तर्राष्ट्रीय चीनी परिषद मुख्य है। इस नाते विश्वव्यापी खाद्यान्न संकट के समाधान में भारत का दायित्व बढ़ जाता है। लेकिन आर्थिक विकास के साथ लोगों की बढ़ती खाद्यान्न मांग और कमजोर कृषि के चलते खाद्यान्न की आंतरिक मांग ही मुश्किल से पूरी हो रही है। ऐसी स्थिति में भारत के लिए विश्व के खाद्यान्न संकट के समाधान की भूमिका निभाना जटिल हो गया है।

यद्यपि अमरीका कृषि प्रधान देश नहीं है फिर भी वह कृषि की सुध लिए हुए है। यहां कहना प्रांसगिक होगा कि कोई देश कुछेक क्षेत्रों के बल पर ही विकसित नहीं हो जाता है। विकसित अवस्था को पाने के लिए सभी क्षेत्रों को आगे बढ़ाना जरूरी है। भारत को यह बात ध्यान में रखनी होगी कि कृषि को उपेक्षित छोड़कर विकसित अवस्था को प्राप्त करना मुश्किल है। कोई देश कैसे विकसित होता है और किस प्रकार लम्बे समय तक विकसित अवस्था में बने रहता है। भारत को इस बारे में अमरीका से सीख लेनी चाहिए। विश्व के अभूतपूर्व खाद्यान्न संकट के दौर में भी अमरीका में लोग कृषि कार्य से जुड़े हुए हैं। वहां प्रत्येक एक अरब डालर के फार्म क्षेत्र निर्यात से 12 हजार अमरीकियों के लिए रोजगार सृजित होता है। वर्ष 2008 में फार्म क्षेत्र निर्यात 100 अरब डालर होने का अनुमान है। इसका अभिप्राय 12 लाख नये रोजगार सृजन से है। अमरीका में प्रत्येक चार में से एक फार्म निर्यात के लिए फसल उत्पादित कर रहा है। लगभग 16 प्रतिशत फार्म श्रम शक्ति निर्यात के लिए उत्पादन से जुड़ी हुई है। अमरीका के फार्म क्षेत्र निर्यात का 35 प्रतिशत एशिया खरीदता है। अमरीका की अर्थव्यवस्था में फार्म क्षेत्र व्यापार उत्पादन, रोजगार और आय का 'जेनरेटर' है। वहां का कृषि निर्यात नित नई ऊंचाइयों को छू रहा है। अमरीकी किसान बड़ी मात्रा में फयूल, खाद और इनपुट्स खरीद कर अर्थव्यवस्था को गति देने में भूमिका निभा रहे हैं। इसके विपरीत भारत में कृषि गौण पड़ चुकी है। कृषि क्षेत्र में निजी और सार्वजनिक निवेश बहुत कम है। गांवों की आधारभूत संरचना कमजोर है। दूसरी हरित क्रांति की केवल चर्चा हो रही है। यदि यही हालात बने रहे और समय रहते कृषि की सुध नहीं ली तो खाद्यान्न संकट के शीघ्र ही भारत में पांव पसारने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है। यहां खाद्यान्न की कीमतों में उछाल खाद्यान्न संकट के प्रवेश का संकेत है।

> विश्व के कृषि उत्पादक देशों की मालीहालत को देखते हुए खाद्यान्न संकट का समाधान विकसित देशों पर निर्भर है। चीन और भारत भी इस दिशा में सहयोग करने की स्थिति में है। अमरीका, कनाड़ा, रूस, आस्ट्रेलिया ऐसे विकसित देश है जहां के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का भाग अधिक नहीं है, किंतु इन देशों का खाद्यान्न उत्पादन में वर्चस्व है। आस्ट्रेलिया की खाद्यान्न में भूमिका के कारण इसे विकसित कृषि प्रधान देश कह दिया जाता है, जबकि इस देश के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान केवल 3 प्रतिशत ही है।

(लेखक आर्थिक प्रशासन तथा वित्तीय प्रबंध विभाग में व्याख्याता एवं भारत सरकार के योजना आयोग के कौटिल्य पुरस्कार से सम्मानित हैं।)

ई–मेल : opsomdeep@yahoo.com

कृषि उत्पादन में उत
किसानों को

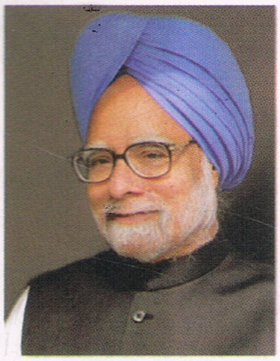

डा० मनमोहन सिंह
माननीय प्रधानमंत्री भारत सरकार

किसान की उन्न

ष्ट उपलब्धि के लिए
ष्ट्र का नमन

श्री शरद पवार
मानीय कृषि मंत्री, भारत सरकार

2007–08 में खाद्यान्न उत्पादन 22.73 करोड़ टन के रिकार्ड स्तर पर

श्री कांति लाल भूरिया
माननीय कृषि राज्य मंत्री

गेहूँ, चावल, मोटे अनाजों, दलहनों, तिलहनों, कपास का रिकार्ड उत्पादन

देश ने मुख्य फसलों के उत्पादन में अब तक की सबसे बड़ी उपलब्धि प्राप्त की है। भारत सरकार किसानों, कृषि वैज्ञानिकों और विस्तार कर्मियों को बधाई देती है और उनका धन्यवाद ज्ञापन करती है।

ख्य उपलब्धियां :

फसल	वर्ष	
	2003-04	2007-08
खाद्यान्न	213.19	227.32
चावल	88.53	95.68
गेहूँ	75.15	76.78
मक्का	14.98	18.54
तुर	2.36	3.03
कपास	13.73	23.19

उत्पादन मिलियन टन/बेल्स में
(2007–08: तीसरा अग्रिम आंकलन)

नई पहल:

- राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन (एनएफएसएम): हमारे देश के लोगों की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए गेंहू, चावल और दलहन के उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि करने के लिए प्रारम्भ की गई है।
- राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (आरकेवीवाई): कृषि में सार्वजनिक निवेश को बढ़ाने और किसानों को अधिकतम लाभ पहुँचाने के लिए प्रारम्भ की गई है।
- राष्ट्रीय कृषि विस्तार प्रणाली (एनएईएस): देश के सभी जिलों में 'आत्मा' स्थापित कर और किसानों के लिए विस्तृत प्रशिक्षण, एक्सपोजर दौरे और प्रदर्शन कार्यक्रमों के साथ 50,000 फार्म स्कूलों को स्थापित कर सुदृढ़ किया जा रहा है।

आइये, वर्ष 2008–09 में खाद्यान्न उत्पादन के एक और रिकार्ड को प्राप्त करें।

कृषि एवं सहकारिता विभाग
कृषि मंत्रालय
भारत सरकार

davp 01101/13/0019/0809

KH-07/08/03

भारतीय कृषि का विश्लेषणात्मक विवेचन

प्रोफेसर सी.एम. चौधरी

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का आधार है। देश की कार्यशील जनसंख्या का 52 प्रतिशत भाग कृषि में कार्यरत है। अनेक उद्योगों – सूती वस्त्र, जूट, चीनी एवं तेल मिलों के कच्चे माल का स्रोत कृषि है। अनेक औद्योगिक उत्पादों उर्वरक, कीटनाशक दवाइयां, सीमेन्ट, कृषि उपकरण तथा उपयोग वस्तुओं की मांग कृषि क्षेत्र से उत्पन्न होती है। भारतीय निर्यात का 70 प्रतिशत कृषि क्षेत्र से है। राष्ट्रीय आय का 17.5 प्रतिशत हिस्सा कृषि क्षेत्र से ही होता है। वर्ष 2006–07 में खाद्यान्न का उत्पादन 217.3 मिलियन टन था तथा 2007–08 में 219.3 लाख मिलियन टन होने का अनुमान है।

भारतीय कृषि की समस्यायें

भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। इसका महत्वपूर्ण स्थान होने के बावजूद भी इसकी निम्न समस्यायें हैं :–

कृषि मानसून का जुआ– भारत में आर्थिक नियोजन के छः दशक होने के बावजूद भी कृषि मानसून पर आश्रित है। इससे कृषि उत्पादन में उच्चावचय होते रहते हैं। इस अनिश्चितता से कृषि नियोजन का प्रभावी क्रियान्वयन नहीं होता है। कृषि विकास दर 1951–61 में 3.3 प्रतिशत थी जो 2007–08 में 2.6 प्रतिशत रह गई है।

नई तकनीकी का उपयोग गेहूं–चावल तक सीमित रहा

नई तकनीकी का सीमित उपयोग – वर्ष 1961 से कृषि क्षेत्र में नई तकनीकी का उपयोग किया गया जिसके कारण खाद्यान्न के उत्पादन में वृद्धि हुई है। लेकिन इस तकनीकी का उपयोग गेहूं तथा चावल तक ही सीमित रहा है। अन्य खाद्य एवं गैर–खाद्य फसलों में इसका उपयोग नहीं किया गया है। शुष्क खेती का क्षेत्र इस तकनीकी से अछूता रहा है।

कृषि निवेश में कमी – कृषि निवेश में सरकार द्वारा निवेश बढ़ाकर कृषि उत्पादन में वृद्धि का उद्देश्य होता है, लेकिन यह निवेश 1960–61 में 35 प्रतिशत था वह घटकर वर्ष 2003–04 में 26 प्रतिशत रह गया है। निजी क्षेत्र का निवेश 65 प्रतिशत से बढ़कर 74 प्रतिशत हो गया है।

भूमि सुधारों की विफलता– भारत सरकार ने जमींदारी और जागीरदारी समाप्त कर दी है तथा काश्तकारी अधिनियम में संशोधन कर कृषकों को काश्तकारी अधिकार दिये हैं। लेकिन आज भी प्रभावी क्रियान्वयन के अभाव में कृषकों को स्थाई अधिकार प्राप्त नहीं हुए हैं तथा नये जागीरदार – राजनेता, उद्योगपति, प्रगतिशील कृषक तथा नौकरशाह पैदा हो गये हैं जिसके कारण चकबन्दी, सीलिंग से अधिक भूमि का अधिग्रहण एवं वितरण नहीं हुआ है। अनुसूचित जाति तथा जनजाति को स्थाई अधिकार प्राप्त नहीं हुए हैं।

निम्न उत्पादकता – भारत में कृषि उत्पादकता अन्य देशों की तुलना में निम्न है तथा देश के विभिन्न भागों में भी उत्पादकता में काफी अन्तर पाया जाता है। वर्ष 2005–06 में महाराष्ट्र में गेहूं का उत्पादन 1393 किलो प्रति हैक्टेयर था जबकि पंजाब में यह 4179 किलो रहा है।

सिंचाई की घटती प्रतिशत दर – भारत में कृषि की सिंचाई दर 1950–51 से 1989–90 की अवधि में 3 प्रतिशत रही है जो आठवीं, नवीं, तथा दसवीं, योजना में घटकर क्रमशः 1.2 प्रतिशत, 1.7 प्रतिशत तथा 1.8 प्रतिशत रह गई है।

समाधान

कृषि का भारत की राष्ट्रीय आय में योगदान 1950–51 में 55 प्रतिशत था जो अब घटकर 17.5 प्रतिशत रह गया है। कृषि की विकास दर भी घटकर 2.6 प्रतिशत रह गई है। दो तिहाई से अधिक देश की जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। कृषि उत्पादन स्थिर हो गया है तथा प्रति व्यक्ति उत्पादन भी घटकर सत्तर के दशक के बराबर हो गया है। 2001–2005 की अवधि में भारत में कृषकों द्वारा की गई आत्महत्याओं की संख्या 87000 रही है। निर्धनता उन्मूलन, रोजगार के अवसरों में वृद्धि करने तथा आर्थिक विषमताओं को कम करने के लिए कृषि विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी होगी तथा इसके लिए अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन नीतियों का निर्धारण करके प्रभावी क्रियान्वयन करना होगा। कृषि की विभिन्न समस्याओं के समाधान के लिए निम्न सुझाव दिये जा सकते हैं–

कृषि को सर्वोच्च प्राथमिकता – एशिया तथा प्रशान्त हेतु संयुक्त राष्ट्र के आर्थिक एवं सामाजिक आयोग ने सही कहा है कि कृषि की निरन्तर उपेक्षा से निर्धनता तथा आर्थिक विषमता बढ़ी है। इसके लिये समष्टीमूलक आर्थिक नीतियों में सुधार करना होगा जिससे कि सस्ती ब्याज दर पर कृषि क्षेत्र को पर्याप्त साख प्राप्त हो सके और कृषि के लिए विस्तार सेवाओं की आपूर्ति निरन्तर होती रहे। सिंचाई तथा ग्रामीण आधारभूत संरचना पर पर्याप्त निवेश किया जाये। चीन का उदाहरण अनुसरण करने योग्य है जहां कृषि को प्राथमिकता देकर अस्सी के दशक में गरीबी घटकर आधी रह गई है। वियतनाम, थाईलैण्ड, बंगलादेश तथा अन्य देशों में भी निर्धनता में कमी हुई है।

दूसरी हरित क्रान्ति की आवश्यकता – प्रथम हरित क्रान्ति के जनक प्रो. एम.एस.स्वामीनाथन ने सही कहा है कि भारत में अब दूसरी हरित क्रान्ति की आवश्यकता है जिसके अन्तर्गत अनेक फसलों की पैदावार में बढ़ोतरी करनी होगी। अधिक उपज देने वाले बीज, रासायनिक खाद, कीटनाशक दवाओं आदि की बड़ी मात्रा में आपूर्ति कर देश के विभिन्न भागों में इसका विस्तार करना होगा। इसके लिए कृषि उत्पादकता में वृद्धि आवश्यक है।

कृषि अनुसंधान एवं विस्तार सेवायें – कृषि के उत्पादन तथा उत्पादकता में वृद्धि के लिए कृषि अनुसंधान एवं विस्तार सेवाओं पर अधिक निवेश करना आवश्यक है। 2008–09 के बजट में पहली बार राष्ट्रीय किसान विकास हेतु 25000 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया हैं। कृषि अनुसंधान के माध्यम से कृषि क्षेत्र में नवीनतम पद्वतियों का लाभ विस्तार सेवाओं के माध्यम से लघु एवं सीमान्त कृषकों तक पहुंचाया जा सकता है। इससे कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि हो सकेगी।

सिंचाई क्षेत्र में वृद्धि – लघु एवं मध्यम सिंचाई परियोजनाओं को तैयार कर इनका क्रियान्वयन कर सिंचित क्षेत्र का विस्तार किया जा सकता है, जिससे कि मानसून की अनिश्चितता से निपटा जा सके। 2008–09 के बजट में 14 राष्ट्रीय सिंचाई परियोजनाओं की घोषणा की गई है। सिंचाई परियोजनाओं के लिए 20 हजार करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। यह गत वर्ष की तुलना में 9000 करोड़ रुपये अधिक है।

प्रभावी भूमि सुधार – आजादी के पश्चात् जमींदारी एवं जागीरदारी प्रथा समाप्त कर दी गई थी। सीलिंग से अधिक भूमि का अधिग्रहण कर भूमिहीनों में आवंटित करना था। लेकिन कानून के पहले तथा बाद में अतिरिक्त भूमि अधिगृहीत नहीं की जा सकी है। उपविभाजन तथा उपखण्डन के कारण अनार्थिक जोत बढ़ने से आधुनिक तरीकों से कृषि करना संभव नहीं है। इसके लिए चकबन्दी तथा सीलिंग से अधिक भूमि का अधिग्रहण कर भूमिहीनों में इसका आवंटन आवश्यक है। व्यापारी, राजनीतिज्ञ, उद्योगपति तथा प्रगतिशील किसानों ने बड़ी मात्रा में जमीनें खरीद कर नये जागीरदार के रूप में प्रगट हो गये हैं। इससे भूमिहीनों की संख्या बढ़ी है। ऐसी स्थिति में सरकार को वास्तविक काश्तकार को ही भूमि स्वामित्व का अधिकार देना होगा। इससे कृषि उत्पादन में वृद्धि होगी तथा आर्थिक विषमता में कमी की जा सकेगी।

कृषि बीमा – 1999–2000 से भारत में राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना लागू की गई। 2006–07 तक 971 लाख कृषकों को इसका लाभ दिया गया है जिसका क्षेत्रफल 156 मिलियन हैक्टेयर भूमि है। बीमित धनराशि 92618 करोड़ रुपये है तथा 9855 करोड़ रुपये के दावों का भुगतान किया जा चुका है। इस योजना का और अधिक विस्तार करना आवश्यक है जिससे कि कृषक प्राकृतिक विपदाओं के कारण होने वाली हानि से आर्थिक कठिनाइयों का सामना नहीं करे। केन्द्र तथा राज्य सरकारें एक साथ विचार विमर्श कर इस

किसानों का भागीदारी कार्य शोध कार्यक्रम

जल संसाधन मंत्रालय ने ज्यादा अनाज तथा प्रति बूंद जल से आय पर उप समिति की सिफारिश पर किसानों को उपज बढ़ाने के लिए उचित कृषि अर्थव्यस्था अपनाने के उद्देश्य से 5000 किसानों का भागीदारी कार्य शोध कार्यक्रम शुरू किया है। इन कार्यक्रमों की शुरूआत 24,4685 करोड़ रुपये की लागत से कृषि विश्वविद्यालयों, आईसीएआर शोध संस्थान, आईसीआरआईएसएटी तथा डब्ल्यूएएलएमआईएस की मदद से पूरे देश में की जा रही है।

प्रत्येक किसान भागीदारी कार्य शोध कार्यक्रम कम से कम एक हैक्टेयर में लागू किया जाएगा और खेत मालिक के परिवार को इस कार्यक्रम में स्वामित्व का अनुभव होगा। प्रत्येक कार्यक्रम की लागत 50,000 रुपये होगी, जिसमें वेतन, आवागमन खर्चा, ढांचागत, उपकरण तथा उत्पादन लागत इत्यादि शामिल हैं। यह कार्यक्रम 2–3 फसल मौसमों के लिए है तथा मौसम की संख्या फसल के प्रकार तथा उपयोग की गई तकनीकी पर निर्भर करेगी। जल संसाधन मंत्रालय ने 60 संस्थानों द्वारा 5000 कार्यक्रमों के लिए 63 प्रस्तावों को मंजूर किया है और 13.12 करोड़ रुपये की राशि जारी की गई है। (पसूका)

योजना को व्यापक स्तर पर प्रभावी ढंग से लागू करें।

कृषकों हेतु राष्ट्रीय नीति– हरित क्रान्ति के जनक प्रो. स्वामीनाथन राष्ट्रीय कृषक आयोग के अध्यक्ष रहे हैं। इन्होंने 2007 में कृषकों के हितों को ध्यान में रखकर एक राष्ट्रीय नीति की घोषणा की है जिसमें उत्पादन तथा उत्पादकता, जल के कुशलतम उपयोग, नई तकनीकी, बीज तथा मिट्टी परीक्षण, साख एवं बीमा, सामाजिक सुरक्षा सेवाओं, न्यूनतम समर्थन मूल्य तथा खाद्य सुरक्षा जैसे विषयों का समावेश किया गया है। इस नीति को विभिन्न विभागों में समन्वय स्थापित कर केन्द्र तथा राज्य सरकारों को पर्याप्त वित्तीय संसाधनों की आपूर्ति कर प्रभावी ढंग से लागू करना होगा। कृषि को उद्योग के रूप में विकसित करना होगा।

राष्ट्रीय कृषि विकास योजना – यह योजना 16 अगस्त 2007 से शुरू की गई है जिसके अन्तर्गत राज्यों की कृषि निवेश में हिस्सेदारी बढ़ाने का प्रयास किया गया है। कृषि विकास दर 4 प्रतिशत का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए केन्द्र सरकार ने ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में 25 हजार करोड़ रुपये का प्रावधान किया है। इस योजना के अन्तर्गत राज्यों को केन्द्र सरकार द्वारा शत प्रतिशत अनुदान दिया जायेगा। वर्ष 2007–08 के लिए 1500 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। इस योजना के सफल एवं प्रभावी क्रियान्वयन हेतु विभिन्न विभागों तथा केन्द्र सरकारों के बीच समन्वय स्थापित करना आवश्यक है।

विकास केन्द्र तथा गैर–कृषि कार्य – निर्धनता उन्मूलन तथा रोजगार के अवसरों में वृद्धि करने के लिए कृषि के साथ–साथ गैर–कृषि कार्यों को भी प्रोत्साहन देना होगा। विकास केन्द्र स्थापित करने होंगे। महिलाओं को प्रोत्साहन देकर उद्यमी के रूप में आगे लाना होगा। कृषि क्षेत्र में महिला वैज्ञानिकों को प्रोत्साहन देकर गैर–कृषि कार्यों को बढ़ावा दिया जा सकता हैं। वियतनाम, चीन, थाईलैण्ड तथा बंगलादेश आदि के उदाहरण हमारे सामने हैं जहां निर्धनता उन्मूलन में बड़ी सफलता प्राप्त की है। भारत को भी इन देशों से शिक्षा लेकर कृषि को सुदृढ़ आधार प्रदान करना होगा।

समतल खेत में जुताई करता किसान

निष्कर्ष – भारतीय कृषि को सुदृढ़ आधार प्रदान करने के लिए उपर्युक्त समाधानों को व्यवहार में प्रभावी ढंग से लागू करना होगा। कृषि क्षेत्र में आमूलचूल परिवर्तन करने के लिए अनुसंधान तथा विकास में विनियोग बढ़ाकर उत्पादकता में वृद्धि की जा सकती है। मानव पूंजी, विस्तार सेवायें, सिंचाई तथा ग्रामीण आधारभूत संरचना पर अधिक विनियोग की आवश्यकता है। ग्रामीण क्षेत्र को शहरी क्षेत्र तथा बाजारों से जोड़ना होगा। समष्टीमूलक नीतियों, साख उपकरणों तथा फसल बीमा को कृषकों के अनुकूल बनाना होगा। कृषि में विविधता, विपणनोन्मुखी क्षेत्र तथा उच्च मूल्य संवर्द्धन को लागू करना होगा। इन सबकी सफलता के लिए केन्द्र तथा राज्य सरकारों में मधुर सम्बन्ध एवं सहयोग, विभिन्न विभागों में समन्वय तथा अपेक्षित जनसहयोग और जन चेतना की आवश्यकता होगी। इससे भारतीय कृषि एक सुदृढ़ एवं व्यावसायिक उद्योग का रूप ले सकती है जिससे कृषि में प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप से नियोजित लोगों की आर्थिक स्थिति में सुधार हो सकेगा।

(लेखक राजस्थान विश्वविद्यालय के आर्थिक प्रशासन और वित्तीय प्रबंध विभाग में प्रोफेसर हैं।)

लेखकों से

कुरुक्षेत्र के लिए मौलिक, अप्रकाशित लेखों का स्वागत है। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो (Krutidev 010 CD में) और उसके साथ ई–मेल तथा मौलिकता का प्रमाण–पत्र संलग्न हो। **कुरुक्षेत्र** में साहित्यिक रचनाएं प्रकाशित नहीं की जाती हैं। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाएं। लेख संपादक, **कुरुक्षेत्र** कमरा नं. 655, 'ए' विंग, गेट नं. 5, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110011 के पते पर भेजें।

बढ़ती जनसंख्या - एक समस्या

(जनसंख्या दिवस पर विशेष)

डॉ. अंजली जायसवाल

वर्तमान में बढ़ती जनसंख्या ने सम्पूर्ण विश्व के बुद्धिजीवियों का ध्यान अपनी ओर केन्द्रित कर लिया है, क्योंकि जिस रफ्तार से जनसख्या में वृद्धि हो रही है उससे भविष्य में जनसंख्या का रूप अत्यंत ही विकराल हो जाएगा और आम जनजीवन का सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक पक्ष बहुत अधिक प्रभावित होगा, जिससे मानव जीवन का अस्तित्व भी खतरे में पड़ सकता है। प्रारंभ में वर्ष 1804 में विश्व की कुल जनसंख्या केवल एक अरब थी, किन्तु वर्ष 1927 में यह दोगुनी अर्थात 2 अरब हो गई। जनसंख्या वृद्धि की यह गति और तीव्र हुई तथा अगली एक अरब की वृद्धि केवल 34 वर्षों में ही हो गई। वर्ष 1974 में विश्व में जनसंख्या चार अरब हो गई मात्र 13 वर्षों में। विश्व की जनसंख्या में पुनः एक अरब की वृद्धि होने में मात्र 12 वर्ष लगे। 11 जुलाई 1987 को विश्व के 5 अरबवें शिशु का जन्म यूगोस्लाविया में हुआ। इस प्रकार तभी से 11 जुलाई को प्रतिवर्ष विश्व जनसंख्या दिवस के रूप में मनाया जाता है।

वर्ष 1999 में विश्व की जनसंख्या 6 अरब के आकड़े को भी पार कर गई। वर्तमान आंकड़ों के अनुसार विश्व की जनसंख्या 6667524693 तक पहुंच गई है। यूनाइटेड स्टेट सेंसस ब्यूरो के आकंडों के अनुसार वर्ष 2011 तक यह 7 अरब हो जायेगी। स्पष्ट है कि जनसंख्या वृद्धि की समस्या वर्तमान में किसी राष्ट्र की सीमा तक ही सीमित नहीं है अपितु सम्पूर्ण विश्व की समस्या है, परन्तु विकसित देशों की अपेक्षा विकासशील देशों में गम्भीर रूप धारण किये हुए है। विश्व के सर्वाधिक जनसंख्या वाले देशों में चीन, भारत, अमरीका, इण्डोनेशिया, ब्राजील, पाकिस्तान, बांग्लादेश, रूस, नाइजीरिया और जापान है। जिनमें 7 विकासशील व 3 विकसित देश शामिल है।

21वीं शताब्दी की पहली जनगणना वर्ष 2001 के आंकड़ों के अनुसार भारत जनसंख्या की दृष्टि से अरबपति हो गया है। 11 मई वर्ष 2000 की सुबह के 5 बजकर 50 मिनट पर दिल्ली के सफदरजंग अस्पताल में एक अरबवें बालिका शिशु का जन्म हुआ जिसका नाम आस्था रखा गया। चीन के बाद भारत विश्व का दूसरा सर्वाधिक जनसंख्या वाला देश है। भारत में विश्व के कुल क्षेत्रफल का मात्र 2.4 प्रतिशत भू–भाग है जिस पर विश्व की 16 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है।

आंकड़ों पर नजर डाले तो भारत में वर्ष 1901 में 23 करोड़ जनसंख्या निवास करती थी जिसमें धीरे–धीरे वृद्धि होती गयी और आजादी के बाद वर्ष 1951 में यह 36 करोड़ हो गयी। वर्ष 1991 के बाद जनसंख्या में तेजी से वृद्धि होने लगी और वर्ष 2001 में यह 102 करोड़ तक पहुंच गई। इसका अभिप्राय यह है कि भारतीय जनसंख्या में वर्ष 1901 से वर्ष 2001 के मध्य में लगभग पांच गुना वृद्धि हुई। वृद्धि की बात करते हैं तो आजादी के बाद के 50 वर्षों में भारत की जनसंख्या में वृद्धि (लगभग 66 करोड़) आजादी के पहले के 50 वर्षों में (लगभग 13 करोड़) वृद्धि से कहीं अधिक है। एक अनुमान के अनुसार वर्तमान में भारत की जनसंख्या लगभग 114.79 करोड़ है। देश में प्रतिवर्ष लगभग 1.55 करोड़ जनसंख्या बढ़ जाती है।

भारत में जनघनत्व निरन्तर बढ़ता ही जा रहा है। वर्ष 1901 में जनघनत्व 77 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. था जो बढ़कर वर्ष 2001 में 324 व्यक्ति प्रतिवर्ग किमी. हो गया है। भारत का जनघनत्व चीन के जनघनत्व (133 प्रतिवर्ग किमी) से कहीं अधिक है। जबकि चीन में भारत से अधिक जनसंख्या निवास करती है। वहीं जनसंख्या की वार्षिक वृद्धि भारत में 1.5 प्रतिशत है जबकि चीन में 1 प्रतिशत है। यूनाइटेड स्टेट सेंसस ब्यूरो के आकड़ों के अनुसार, अगर भारत की जनसंख्या वृद्धि की दर में कमी नहीं की गई तो वर्ष 2030 में भारत की जनसंख्या चीन से अधिक हो जाएगी।

तीव्रगति से बढ़ती जनसंख्या ने भूमि के स्वरूप को छोटा कर दिया है। भूमि तो जितनी है उतनी ही रहेगी क्योंकि भूमि एक ऐसी प्राकृतिक देन है जिसका निर्माण नहीं किया जा सकता है। आज बढ़ती जनसंख्या ने समूचे विश्व के सामने एक ऐसा प्रश्न चिन्ह लगा दिया है जिसे हटाना मुश्किल सा लगता है।

भारत के 28 राज्यों व 7 केन्द्रशासित प्रदेश की जनसंख्या में

तालिका–1 विश्व की जनसंख्या

वर्ष	1804	1927	1961	1974	1987	1999	2011
जनसंख्या	1 अरब	2 अरब	3 अरब	4 अरब	5 अरब	6 अरब	7 अरब

तालिका–2 विश्व के सर्वाधिक जनसंख्या वाले दस देश

देश	जनसंख्या
चीन	1330044605
भारत	1147995898
अमेरिका	303824646
इंडोनेशिया	237512355
ब्राजील	191908598
पाकिस्तान	167762040
बांग्लादेश	153546901
रूस	140702094
नाइजीरिया	138283240
जापान	127288419

भी पर्याप्त अंतर देखने को मिलता है। 2001 के आंकड़ों के अनुसार जहां सबसे अधिक जनसंख्या वाले राज्य उत्तर प्रदेश की आबादी 16.60 करोड़ है वही दूसरी तरफ सबसे कम आबादी वाला राज्य लक्ष्यद्वीप की जनसंख्या मात्र 60595 ही है। मानव विकास के तीन प्रमुख अवयवों आय, शिक्षा और स्वास्थ्य के आधार पर भारत का मानव विकास सूचकांक में 126वां स्थान है।

स्पष्ट है कि भारत में जनसंख्या की वर्तमान स्थिति अत्यन्त ही गम्भीर हो चुकी है। दिन प्रति दिन बढ़ती जनसंख्या के लिए कुछ प्रमुख कारण विशेष रूप से उत्तरदायी है।

- शिक्षा का निम्न स्तर।
- धार्मिक व सामाजिक अंधविश्वास।
- पुत्र शिशु की अनिवार्यता।
- परिवार नियोजन में कमी।
- उच्च जन्म दर।
- विवाह की सर्वव्यापकता।

भारतीय समाज में प्रचलित कुछ मान्यताओं व उपर्युक्त निम्न कारणों से पिछले 60 वर्षों (आजादी के बाद से) में भारत की जनसंख्या में तीव्र गति से वृद्धि हुई है। जिस कारण जनसंख्या जो एक मानवीय संसाधन के रूप में जाना जाता है भारत जैसे विकासशील देश के लिए एक गम्भीर समस्या बन गई है जिसका दुष्परिणाम स्पष्ट रूप से निम्न समस्याओं के रूप में परिलक्षित हो रहा है।

- लिंग अनुपात में असमानता।
- गरीबी व बेरोजगारी में वृद्धि।
- शिक्षा, स्वास्थ्य एवं आवास सम्बंधी सेवाओं की मांग में बढ़ोतरी।
- पर्यावरणीय असंतुलन।
- बढ़ता आंतकवाद।

लिंग अनुपात में असमानता आर्थिक एवं सामाजिक जीवन को बहुत अधिक प्रभावित करता है। इसी कारण यह एक महत्वपूर्ण सामाजिक संकेतक के रूप में जाना जाता है। आंकड़ों से स्पष्ट है कि वर्ष 1901 में यह अनुपात प्रति हजार पुरुष पर 972 महिला था जो धीरे–धीरे कम हो कर वर्ष 2001 में 933 हो गया। लिंग अनुपात में गिरावट एक चिंता का विषय है क्योंकि यह इस बात का संकेत है कि आज भी बालक–बालिका शिशु के मध्य भेदभाव करने वाले लोगों की मानसिकता में परिवर्तन नहीं हुआ है।

जनसंख्या वृद्धि ने समस्त विकास योजनाओं को बाधित कर दिया है जिसके कारण गरीबी, बेरोजगारी जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। भारत की करीब 30 करोड़ आबादी गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रही है। अनेक विशेषज्ञों व संस्थाओं ने गरीबी के निर्धारण के लिए अलग–अलग प्रमाप बनाये हैं। योजना आयोग द्वारा गठित विशेषज्ञ दल की रिपोर्ट के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति 2400 कैलोरी प्रतिदिन तथा शहरी क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति 2100 कैलोरी प्रतिदिन के हिसाब से भी जिन्हें खाद्य पदार्थ प्राप्त नहीं हो पाता, उसे गरीबी रेखा के नीचे माना जाता है।

भारत की करीब 70 प्रतिशत आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में अपना जीवन बसर कर रहीं है। जिनकी आय का प्रमुख साधन कृषि कार्य होता है। फलतः इन क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की आय भी अपेक्षाकृत कम होती है। परिवार का आकार बड़ा होने के कारण दो वक्त का भोजन भी मुश्किल से आ पाता है। बेरोजगारी यहां की मुख्य समस्या है। साथ ही इन क्षेत्रों में शिक्षा का स्तर भी निम्न होता है। मुख्य रूप से महिला शिक्षा। अशिक्षित महिला को परिवार नियोजन की सही जानकारी नहीं होती है, परिणामस्वरूप बिना सोचे समझे बच्चे पैदा करती हैं। महिलाओं के शिक्षित होने से परिवार व समाज में उनकी स्थिति मजबूत होती है और वे छोटे परिवार के आकार के महत्व को समझ सकती हैं। साथ ही पुरुष के साथ काम कर अपने परिवार की आर्थिक स्थिति को भी सुधार सकती हैं। बढ़ती जनसंख्या के कारण बेरोजगारों की संख्या में वृद्धि हुई है। जिस अनुपात में जनवृद्धि हो रही है उस अनुपात में रोजगार नहीं मिल रहे हैं परिणामतः गलियों में सड़कों पर घूमते भिखमंगे फुटपाथों पर जीवन गुजारते लोग गृहविहीन व भूमिविहीन मजदूर, बेरोजगार युवा वर्ग तथा घरों में गृहकार्य करती महिलाएं आज भी समाज में विद्यमान हैं।

आज पर्यावरणीय असंतुलन पूरे विश्व के लिए एक चिंता का विषय बना हुआ है। जल, वायु, नदी सभी इतने ज्यादा प्रदूषित हो गये हैं जिससे मानव जीवन के साथ–साथ जीव जन्तुओं का जीवन भी

संकट में पड़ गया है। आज श्वास लेने के लिए शुद्ध वायु, पीने के लिए स्वच्छ पेयजल भी कठिनाई से प्राप्त हो रहा है। आधुनिक उपकरणों व विलासिता की वस्तुओं के दिन प्रतिदिन बढ़ते उपयोग से सम्पूर्ण वायुमण्डल प्रदूषित हो रहा है फलस्वरूप अचानक मौसम में परिवर्तन, तापमान का अधिक बढ़ना व घटना ने अपना असर दिखाना शुरू कर दिया है। ये सभी समस्याएं कहीं न कहीं बढ़ती जनसंख्या से सम्बंधित हैं। गरीबी व बेरोजगारी के कारण युवा वर्ग गुमराह हो जाता है। आज भारत में आतंकवाद भी एक ज्वलंत समस्या है। दिन प्रतिदिन बढ़ते अपराध की जड़ें बढ़ती जनसंख्या से जुड़ी हैं। आमतौर पर अधिकांश लोग यह सोचते हैं कि किसी व्यक्ति को कब और कितने बच्चे पैदा करने हैं यह उस व्यक्ति का अपना निर्णय होना चाहिए और इसमें हस्तक्षेप करने वाला कोई भी कानून व्यक्ति के मूलभूत.अधिकारों का हनन है। यह तस्वीर का एक पहलू है। दूसरा पहलू वह है जिसे अक्सर नजर अंदाज कर दिया जाता है और वह है जन्म लेने वाले बच्चे के अधिकारों का। एक बच्चे को ऐसी सामाजिक आर्थिक परिस्थितियों में पैदा किया जाय जिनमें उसे मानवयोग्य जिंदगी एवं सुविधाएं तथा शारीरिक एवं मानसिक आवश्यकताओं की पूर्ति न हो, न सिर्फ जन्म लेने वाले बच्चे के मानवाधिकारों का हनन है अपितु एक सामाजिक अपराध भी है।

भारत जैसे विकासशील देश में जनसंख्या सिर्फ इसलिए समस्या नहीं है कि यहां एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्रों के निवासियों की संख्या बहुत अधिक है बल्कि यह इस कारण भी भयावह नजर आती है क्योंकि उनमें से अधिकांश अमानवीय परिस्थितियों में जीने को मजबूर हैं। अतः इस जनवृद्धि को कम करने के लिए जन्म–मृत्यु दर के अंतर को कम किया जाना चाहिए क्योंकि जनांकिकीय चक्र उस अवस्था में पहुंच चुका है जिसमें जनसंख्या विस्फोट हो सकता है। इस दृष्टि से भारत में जनसंख्या नियंत्रण के लिए दो स्तर पर प्रयास आवश्यक हैं। एक तो परिवार नियोजन कार्यक्रमों द्वारा लोगों की बढ़ती संख्या पर रोक लगाना तथा दूसरा सामाजिक आर्थिक प्रयासों द्वारा लोगों को बेहतर जीवन स्तर प्रदान करने के उपाय करना।

सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से इन समस्याओं को कम करने, विशेष कर ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए निर्धारित कुल योजना धन राशि में से अधिकांश भाग इन पर व्यय करने को प्राथमिकता दी, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में विकास की सम्भावनाएं प्रबल हुई। लेकिन वास्तविकता यह भी है कि अभी तक किये गये प्रयासों के बाद भी सभी ग्रामों में शिक्षा, स्वास्थ्य, मकान, बिजली, स्वच्छ पेयजल जैसी मूलभूत आवश्यकताएं भी पूरी तरह से उपलब्ध नहीं हो पा रही हैं।

आजादी के बाद से बढ़ती जनसंख्या पर रोक लगाने के लिए जनसंख्या नियंत्रण के कार्यक्रमों को अपनाया गया फिर भी आज एक विशाल जनसमुदाय हमारे समक्ष है। यह सत्य है कि जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण सरकारी योजनाओ में प्रमुखता से शामिल किया जाता रहा किन्तु इस पर कभी भी सच्चाई के साथ वास्तविक रूप से अमल में नहीं लाया गया परिणामतः आज भारत जनसंख्या वृद्धि की दौड़ में आगे को बढ़ता जा रहा है। इस सन्दर्भ में विभिन्न सामाजिक धार्मिक संगठनों तथा राजनैतिक दलों ने भी इस दिशा में अपनी भूमिका न के बराबर निभायी है।

यदि भारत देश में परिस्थितियां (जनवृद्धि के कारण उत्पन्न समस्याएं) इसी प्रकार बनी रहीं और सरकार की नीति व योजनाएं

तालिका–3 भारत में विगत एक शताब्दी में जनसंख्या का बदलता स्वरूप

वर्ष	जनसंख्या	घनत्व	लिंग अनुपात	दशकीय वृद्धि दर
1901	238396327	77	972	–
1911	252093390	82	964	5.75
1921	251321213	81	955	0.03
1931	278977238	90	950	11.00
1941	318666580	103	945	14.22
1951	361088090	117	946	13.31
1961	439234771	142	941	21.51
1971	548159652	177	930	24.80
1981	683329097	216	934	24.66
1991	843387888	267	927	23.85
2001	102015247	324	933	21.34

तालिका–4 भारत की जनसंख्या वृद्धि दर

जनसंख्या	वृद्धि दर
प्रति वर्ष	15531000
प्रति माह	1273033
प्रति दिन	42,434
प्रति घंटा	1768
प्रति मिनट	29

मात्र औपचारिक रहीं तो निश्चित रूप से जन वृद्धि को कम करने के लिए बनाये गये परिवार नियोजन के सभी लक्ष्य केवल कागजों और योजनाएं दस्तावेजों में ही पूरे होंगे वास्तविक रूप में नहीं। आजादी के 60 वर्षों बाद भी हम जनसंख्या को कम क्यों नहीं कर सके? यह एक बहुत ही महत्वपूर्ण प्रश्न हमारे सामने खड़ा है।

जनसंख्या वृद्धि एक सामाजिक समस्या है। अतः यह आवश्यक है कि जनसंख्या नियन्त्रण हेतु सामाजिक वातावरण में परिर्वतन लाया जाय तथा जनसंख्या वृद्धि के लिए जिम्मेदार गलत परम्पराओं, मान्यताओं, रूढ़ियों तथा अंधविश्वासों का तर्कपूर्ण ढंग से समाधान कर जनसंख्या नियंत्रण हेतु प्रभावी वातावरण तैयार किया जायं।

अगर भारत की जनसंख्या वृद्धि दर में कमी नहीं की गई तो वर्ष 2030 में भारत की जनसंख्या 153 करोड़ से अधिक होगी जबकि चीन की जनसंख्या 146 करोड़। स्पष्ट है कि भारत की जनसंख्या वर्ष 2030 में चीन की जनसंख्या से आगे हो जायेगी।

वर्ष 1950 में भारत में कुल प्रजननता दर लगभग 6 बच्चे प्रति महिला था। वर्ष 1952 के बाद भारत ने इस जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण के लिए काम किया। वर्ष 1983 में देश की राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति का लक्ष्य कुल प्रजननता दर को प्रतिस्थापन दर 2.1 वर्ष 2000 तक लाने का लक्ष्य रखा परन्तु इसमें सफलता नहीं मिली। फिर वर्ष 2000 में भारत ने नई जनसंख्या नीति बनायी, इस बढ़ती जनसंख्या पर नियंत्रण के लिए, जिसका प्रमुख लक्ष्य कुल प्रजननता दर को कम कर 2.1 तक 2010 में करना।

वर्तमान आकड़ों के अनुसार भारत में कुल प्रजननता दर (2.7 प्रति महिला) अभी भी अधिक है। इसको देखते हुए हम कह सकते है कि क्या वर्ष 2010 तक हम अपने लक्ष्य (प्रतिस्थापन दर 2.1) को प्राप्त कर पायेंगे?

यूनाइटेड सेंसस ब्यूरो के अनुमान के अनुसार भारत प्रतिस्थापन दर को 2030 में प्राप्त कर पायेगा। भारत की जनसंख्या प्रक्षेपण से यह स्पष्ट है कि वर्ष 2050 में 1.5 से 1.8 करोड़ होगी। भारत की जनसंख्या 21वीं शताब्दी के अन्त में 1.85 करोड़ से 2.18 करोड़ तक पहुंचने वाला पहला और अकेला देश होगा जिसकी जनसंख्या 2 अरब से अधिक होगी। मनुष्य की प्रजनन शक्ति तीव्र होती है और यदि किसी भी तरह की रुकावटें न आये तो किसी भी देश की जनसंख्या 25 वर्ष में दो गुनी हो जाएगी। जबकि जनसंख्या वृद्धि की तुलना में खाद्यान्नों में वृद्धि इस अनुपात में नहीं होगी क्योंकि जनसंख्या ज्यामितिक वृद्धि तथा खाद्यान्न 'अंकगणितीय वृद्धि' के अनुसार बढ़ती है।

अंत में भारत में बढ़ती जनसंख्या और उससे उत्पन्न समस्याओं को देखते हुए यह आवश्यक हो जाता है कि जनसंख्या वृद्धि को कम करने से सम्बन्धित उपायों की जानकारी जनसंख्या शिक्षा के माध्यम से करनी चाहिए। जिससे भविष्य की जनसंख्या पर नियंत्रण कर सकें। अतः जनसंख्या शिक्षा पर विशेष रूप से ध्यान देने की आवश्यकता है और यह समाज के सभी वर्गों के लिए आवश्यक होनी चाहिए। जनसंख्या शिक्षा के माध्यम से परिवार कल्याण कार्यक्रम को लोकप्रिय बनाया जा सकता है जिससे प्रत्येक व्यक्ति स्वयं द्वारा उत्पन्न समस्याओं से अवगत होकर उनके घातक परिणामों से अपनी रक्षा कर सके।

(लेखिका अनुसंधान एवं प्रक्रियात्मक नियोजन संसाधन, नई दिल्ली में रिसर्च फैलो के पद पर कार्यरत है।)

ई–मेल : dr.anjali@irap.org.in

हाथ से सफाई करने वाले कर्मचारियों के पुनर्वास के लिए स्वयं रोजगार योजना

सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय ने हाथ से सफाई करने वाले कर्मचारियों के पुनर्वास के लिए स्वयं रोजगार योजना बनाई है। यह योजना प्रशिक्षण, धन सहायता तथा हाथ से सफाई करने वाले कर्मचारियों और उनके आश्रितों के पुनर्वास के लिए सस्ते लोन मुहैया करायेगी। वर्ष 2008–09 के दौरान इस योजना के तहत् एक अरब रुपये उपलब्ध कराने का प्रावधान किया गया है। इसके अलावा, नागरिक अधिकार सुरक्षा अधिनियम, 1995 तथा अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार से संरक्षण) अधिनियम, 1989 को लागू करने, न्यायिक व्यवस्था को मजबूत बनाने एवं उसे लागू करने, अंतर्जातीय विवाह तथा जागरुकता बढ़ाने और प्रभावित लोगों को राहत तथा पुनर्वास के लिए, राज्य सरकारों तथा केंद्र शासित क्षेत्रों के प्रशासकों को बाकी बची सहायता भी दी जाएगी। (पसूका)

ग्रामीण विकास में नाबार्ड की भूमिका

(नाबार्ड स्थापना दिवस पर विशेष)

डॉ. के. एम. मोदी

कृषि एवं ग्रामीण विकास की अवधारणा को मूर्त रूप देने के लिए ग्रामीण ऋण संरचना के शीर्ष बैंक के रूप में 12 जुलाई 1982 को राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) की स्थापना की गई। कृषि एवं गैर कृषि क्षेत्रों के विकास हेतु आवश्यक वित्त व्यवस्था का प्रावधान करते हुए यह बैंक निश्चित रूप से ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। नाबार्ड कृषि, लघु व कुटीर उद्योगों, गृह व ग्रामोद्योगों, खादी उद्योग, डेयरी विकास, मुर्गीपालन एवं मत्स्यपालन जैसी अनेक आर्थिक क्रियाओं के विकास के माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए कृत संकल्प है। यह बैंक किसानों व अन्य ग्रामीणजनों को प्रत्यक्ष रूप से ऋण उपलब्ध न करवाकर राज्य सहकारी भूमि विकास बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक व वाणिज्यिक बैंक जैसी संस्थाओं के माध्यम से ऋण की उपलब्धता सुनिश्चित करता हैं। यह बैंक राज्य सरकारों को भी 25 वर्ष की अवधि के लिए दीर्घकालीन कर्ज उपलब्ध कराता है जिसके फलस्वरूप राज्य सरकारें सरकारी साख नीतियों की अंश–पूंजी में अंशदान करते हुए ग्रामीण विकास की दिशा में आगे बढ़ रही हैं। ज्ञातव्य है कि वर्ष 2002–2003 में नाबार्ड ने राज्य सरकारों को 61 करोड़ रुपये के ऋण उपलब्ध कराये।

ग्रामीण विकास हेतु आवश्यक वित्त व्यवस्था का प्रावधान करते हुए नाबार्ड केन्द्रीय व राज्य सहकारी बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की कार्यपद्धति के निरीक्षण, निगरानी, उनके पुनर्वास व पुनर्गठन जैसे दायित्वों का निर्वहन भी सफलतापूर्वक कर रहा है। गांवों में विद्यमान विभिन्न साख संस्थाओं में अस्वस्थ प्रतियोगिता रोकने, दोहरेपन व अतिच्छादन कार्यशैली को प्रतिबंधित करने की दिशा में भी नाबार्ड प्रयासरत है ताकि ग्रामीण विकास हेतु आवश्यक वित्त व्यवस्था में अवरोध उत्पन्न नहीं हो, प्राकृतिक आपदाओं जैसे सूखा, बाढ़, अकाल तथा अप्रत्याशित संकटों जैसे अन्य देशों द्वारा आक्रमण, सैन्य कार्यवाही से निपटने के लिए यह बैंक अल्पकालीन ऋणों को मध्यकालीन या दीर्घकालीन ऋणों में परिवर्तित करता है। इसके साथ ही सहकारी बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों व व्यापारिक बैंकों को पुनर्वित्त की सुविधाएं भी प्रदान करता है। कृषि एवं ग्रामीण विकास के लिए नाबार्ड द्वारा वर्ष 2000–2001 से 2005–2006 के दौरान सहकारी बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक व व्यापारिक बैंक को दी गई सहायता का विवरण तालिका में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका से स्पष्ट है कि कृषि एवं ग्रामीण विकास के लिए नाबार्ड द्वारा दी गई सहायता वर्ष 2000–01 में 52,827 करोड़ रुपये से बढ़कर वर्ष 2005–06 में 1,17,899 करोड़ रुपये हो गई। गत छः वर्षों में नाबार्ड द्वारा प्रदत्त सहायता दोगुनी से अधिक हो गई। नाबार्ड द्वारा दी गई सहायता में सहकारी बैंकों का अंश प्रतिशत 2000–01 से 2005–06 के दौरान कम हुआ है जबकि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों व व्यापारिक बैंकों का अंश प्रतिशत बढ़ा है। 2005–06 में नाबार्ड द्वारा दी गई सहायता में सर्वाधिक अंश 66.0 प्रतिशत व्यापारिक बैंकों का रहा जबकि सहकारी बैंकों का अंश लगभग 25 प्रतिशत तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का 9.4 प्रतिशत रहा।

नाबार्ड ग्रामीण क्षेत्रों के विकास हेतु बनाये गए विभिन्न ग्राम विकास कार्यक्रमों के प्रभावी क्रियान्वयन हेतु ऋण प्रवाह को सुनिश्चित करते हुए ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास की धुरी बन गया है। यही नहीं, स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना के ठोस

कृषि एवं ग्रामीण विकास के लिए नाबार्ड द्वारा दी गई सहायता

(करोड़ रु. में)

वर्ष	सहकारी बैंक		क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक		व्यापारिक बैंक		योग
	धनराशि	प्रतिशत	धनराशि	प्रतिशत	धनराशि	प्रतिशत	
2000–01	20800	39.4	4220	8.0	27807	52.6	52827
2000–02	23604	38.0	4854	7.8	33587	54.2	62045
2000–03	23716	34.1	6070	8.7	39774	57.2	69560
2000–04	26959	31.0	7581	8.7	52441	60.3	86981
2000–05	30639	26.6	11718	10.2	72886	63.2	115243
2000–06	28947	24.6	11146	9.4	77806	66.0	117899

क्रियान्वयन हेतु नाबार्ड ने ही क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों व सहकारी बैंकों को आवश्यक वित्त व दिशा निर्देश देते हुए यह प्रयास किया कि सहायता प्राप्त प्रत्येक गरीब परिवार को 3 वर्ष में गरीबी रेखा की परिधि से बाहर निकाला जाय। कृषि व ग्रामीण विकास के लिए अनुसंधान व शोध को बढ़ावा देने के लिए नाबार्ड द्वारा स्थापित रिसर्च व विकास कोष विभिन्न परियोजनाओं को तैयार करने व उनके क्रियान्वयन में अहम् भूमिका निभाते हुए ग्रामीण विकास प्रक्रिया में योगदान दे रहा है। नाबार्ड ने ग्रामीण बैंकिंग स्टॉफ को कृषि एवं ग्रामीण विकास के लिए विशिष्ट प्रशिक्षण की सुविधा उपलब्ध कराने के लिए विशिष्ट संस्थानों की स्थापना की।

ग्रामीण क्षेत्रों में गैर कृषि क्षेत्रों के विकास के लिए नाबार्ड वाणिज्यिक बैंकों को लघु उद्योगों के विकास व संवर्द्धन हेतु वित्त उपलब्ध कराता है। यही नहीं, गैर कृषि क्षेत्र की उन्नति व विकास हेतु आवश्यक नीतियों के निर्माण में मार्गदर्शन व सलाह प्रदान करने के लिए गैर कृषि क्षेत्र सलाहकार समितियों का गठन भी किया गया। नाबार्ड भारत सरकार, विभिन्न राज्य सरकारों एवं योजना आयोग द्वारा लघु एवं ग्रामीण उद्योगों के विकास हेतु किये जाने वाले विभिन्न कार्यक्रमों व योजनाओं में सामंजस्य एवं समन्वय स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। नाबार्ड ने गांवों में गैर कृषि कार्यकलापों के अन्तर्गत हथकरघों के आधुनिकीकरण, रेशम, नारियल के रेशे, कुटीर व ग्रामीण उद्योग व ऊर्जा के गैर परम्परागत स्रोतों के विकास को प्राथमिकता देकर ग्रामीण स्वरोजगार को प्रोत्साहित किया है। जिला ग्रामीण उद्योग परियोजनाओं का गठन तथा नाबार्ड कार्यालय में गैर कृषि क्षेत्र विकास से संबंधित तकनीकी विशेषज्ञों की नियुक्ति गैर कृषि क्षेत्रों के विकास की दिशा में उठाया गया एक महत्वपूर्ण कदम है। इसी भांति गैर कृषि क्षेत्रों में उद्यम कौशल को प्रेरित एवं प्रोन्नत करने का दायित्व कृषि एवं ग्रामीण उद्यम उद्भवन निधि को सौंपा गया है। यही नहीं, नाबार्ड ने ग्रामीण आधारभूत विकास निधि का गठन करके गांवों में अधः संरचना सुविधाओं जैसे सड़क, संचार, विद्युत व ऊर्जा के विकास को प्राथमिकता दी है। ग्रामीण महिलाओं में स्वरोजगार को बढ़ावा देने के लिए नाबार्ड ने ग्रामीण महिलाओं को दरी बुनने, साड़ियों पर कढ़ाई करने व डेयरी चलाने जैसे विविध रोजगार कार्यक्रमों के संचालन हेतु ऋण–प्रवाह को सुनिश्चित करने का प्रयास किया है।

हर्ष का विषय है कि सामाजिक न्याय की दिशा में कदम बढ़ाते हुए नाबार्ड ने ग्रामीण क्षेत्रों के कमजोर वर्गों को संस्थागत ऋण उपलब्ध करवाने हेतु स्वयं सहायता समूह योजना का श्रीगणेश किया ताकि ग्रामीण क्षेत्रों में व्याप्त आर्थिक–सामाजिक विषमताओं की दरारें कम की जा सकें। इसी भांति, कृषकों को अल्पावधि ऋणों की सहज व शीघ्र उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए किसान क्रेड़िट योजना का शुभारंभ किया गया। इस योजना के तहत 30 सितम्बर 2004 तक 435.6 लाख क्रेडिट कार्ड जारी करके 1,11,459 करोड़ रुपये का ऋण स्वीकृत किया जा चुका है। कई बैंकों ने किसान क्रेडिट कार्ड धारकों के लिए दुर्घटना के कारण होने वाली मृत्यु के लिए बीमा योजना शुरू करके किसानों को बीमा की सुविधा उपलब्ध करायी है।

नाबार्ड सहकारी बैंकों व क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को समय–समय पर नई योजनाओं, नई स्कीमों व ऋण विविधीकरण के विभिन्न तरीकों के बारे में आवश्यक जानकारी व दिशा–निर्देश प्रदान करते हुए ग्रामीण विकास के लिए सतत प्रयत्नशील है। नाबार्ड ने सहकारी साख संस्थाओं के अपेक्षित विकास के लिए आवश्यक मानव संसाधन विकास, संसाधन एकत्र व ऋणों की वसूली में सुधार करने के लिए सहकारी विकास निधि की स्थापना की है। इसी तरह, नाबार्ड ने उच्च तकनीक व उच्च मूल्य वाले कृषि कार्यों को प्रोन्नत करने के लिए राज्य स्तरीय कृषि विकास वित्त कंपनियों की नींव रखी। अनार्जक परिसंपतियों पर लगाम कसने के लिए नाबार्ड ने स्वैच्छिक विकास वाहिनी योजना प्रारम्भ की है ताकि गांवों में ऋण–अदायगी संभव हो सके।

उपर्युक्त सम्पूर्ण विश्लेषण से स्पष्ट है कि नाबार्ड लघु सिंचाई, भूमि विकास, कृषि मशीनीकरण, मुर्गी पालन, सुअर पालन, मत्स्य पालन, डेयरी विकास, परिवहन विकास व एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के लिए आवश्यक वित्त पोषण व दिशा निर्देश जारी करते हुए ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान कर रहा है।

(लेखक चिड़ावा कालेज में व्यवसायिक प्रशासन के विभागाध्यक्ष हैं।)

ई–मेल : kmmodi@yahoo.co.in

कुरुक्षेत्र मंगवाने का पता

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड-4, तल-7
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

सूचना की साझेदारी के दस साल

(सार्क मीडिया वर्ष 2008 पर विशेष)

आर. अनुराधा

विकास के लिए सूचना की भागीदारी—स्वतंत्र मीडिया की उपलब्धता और गहरी पहुंच का भरसक इस्तेमाल हो, इसके लिए दक्षिण एशियाई सहयोग संगठन (सार्क) ने समाचार—विचार बांटने में सहयोग के लिए सतत प्रयास किए हैं। 1985 में सार्क की स्थापना के बाद से ही जिन आधारभूत मामलों में आपसी सहयोग पर सहमति हुई उनमें सूचना का क्षेत्र भी शामिल था। दरअसल दक्षिण एशिया के देशों में साझी ऐतिहासिक, सांस्कृतिक पृष्ठभूमि होने के बावजूद एक—दूसरे के प्रति अलगाव का भाव रहा है जो कई बार संदेह के स्तर तक चला जाता रहा है। लेकिन सार्क की स्थापना के साथ ही यह समझ बन गई कि समग्र आर्थिक और सामाजिक प्रगति के लिए सूचना के क्षेत्र में सहयोग जरूरी है और क्षेत्र में शांति और समन्वय को बढ़ावा देने के लिए मीडिया को एक समर्थ माध्यम के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। सभी देश इस बात पर सहमत हुए कि पड़ोसी देशों के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और कानूनी मसलों की बेहतर समझ के लिए रेडियो और टीवी मदद कर सकते हैं। मानवाधिकार, महिलाओं से जुड़े मुद्दे, बहुलता, पर्यावरण और मौसम, मुक्त व्यापार, ऊर्जा और खाद्य सुरक्षा, आपदा प्रबंधन, आतंकवाद, गरीबी, अशिक्षा, अज्ञानता जैसे अनेक मसले हैं जिनका सदस्य देश मिलकर बेहतर समाधान निकाल सकते हैं। अगर सार्क देश मिलकर इनके खिलाफ खड़े हों तो कोई कारण नहीं कि सफल न हो पाएं। मीडिया की इस काम में महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है क्योंकि इसके जरिए सूचना, ज्ञान और अनुभवों की हिस्सेदारी आसानी से की जा सकती है।

सार्क देशों में मीडिया के जरिए सूचना के सघन आदान—प्रदान का स्थानीय पक्ष जितना महत्वपूर्ण है, अंतर्राष्ट्रीय पक्ष भी उतना ही सार्थक है। समाचारों, ऑडियो—विजुअल आदान—प्रदान, समाचार एजेंसियों के सहयोग से क्षेत्रीय खबरों, लोगों, समाजों को महत्व मिलता है। एक—दूसरे की समस्याओं पर चर्चा होती है और समाधान मिलते हैं। समान सामाजिक—सांस्कृतिक—आर्थिक पृष्ठभूमि के कारण समस्याएं और उनके समाधान भी मिलते – जुलते हैं। इस लिहाज से एक के अनुभवों और विचारों से दूसरा सहज ही लाभ उठा सकता है। मीडिया में क्षेत्रीय सहयोग का एक लाभ यह भी है कि इससे वैश्विक सूचना तंत्र पर पश्चिमी मीडिया का एकाधिकार कम होता है।

1996 में नई दिल्ली में सार्क की मंत्रिमंडलीय स्तर की बैठक में सदस्य देशों के बीच सूचना के आदान—प्रदान के महत्व को रेखांकित किया गया। साथ ही फैसला किया गया कि सार्क सदस्य देशों के सूचना मंत्रियों की सालाना बैठकें आयोजित की जाएंगी। इसी फैसले के तहत पहली बैठक ढाका में 25—26 अप्रैल 1998 में हुई। इसमें सूचना और मीडिया पर एक व्यापक कार्ययोजना स्वीकार की गई। इसे ढाका कम्यूनिके के नाम से भी जाना जाता है। इसमें सूचना, समाचारों पत्रों—पत्रिकाओं, पुस्तकों के स्वतंत्र प्रवाह को सुनिश्चित करने के लिए कई योजनाएं बनाई गई। सार्क सदस्य देशों के बीच शांति और सदभाव बढ़ाने और सम्मिलित विकास के लिए सूचना के सहज प्रवाह को बढ़ावा देने, समाचार एजेंसियों में सहयोग बढ़ाने के लिए इंटरनेट के इस्तेमाल, पत्रकारों का सहज आवागमन, क्षेत्रीय मीडिया मंच, सार्क सूचना केन्द्र और मीडिया विकास कोष बनाने, संपादकों और पत्रकारों की सालाना बैठकें करने, रेडियो—टीवी के कार्यक्रमों और फिल्मों का नियमित आदान—प्रदान, रेडियो और टीवी संगठनों के प्रमुखों की बैठकें करने, सूचना तकनीकों की हिस्सेदारी, पत्रकारों का प्रशिक्षण, सार्क उपग्रह छोड़ने और बहुराष्ट्रीय उपग्रह प्रसारण जैसे मुद्दों पर सहमति हुई। सार्क देशों के बीच सहयोग की दिशा में यह एक महत्वपूर्ण उपलब्धि थी। इस कार्ययोजना को श्रीलंका की राजधानी कोलंबों में हुए दसवें सार्क शिखर सम्मेलन में मंजूरी मिल गई।

सार्क सूचना मंत्रियों की दूसरी बैठक 7—9 मार्च 2002 में इस्लामाबाद में हुई। इसमें इस कार्य योजना के कार्यान्वयन की समीक्षा के साथ ही लोक संगीत के लिए सार्क पुरस्कार की स्थापना की घोषणा की गई। सूचना के क्षेत्र में क्षेत्रीय सहयोग के लिए सार्क सदस्य देशों के सूचना मंत्रियों की तीसरी बैठक 11—12 नवंबर 2003 को नई दिल्ली में हुई। इसमें साप्ताहिक सार्क रेडियो समाचार कार्यक्रम 'सार्क रेडियो बुलेटिन' और मासिक टेलीविजन समाचार कार्यक्रम 'सार्क टीवी बुलेटिन' शुरू करने का फैसला किया गया। सदस्य देशों ने अपने राष्ट्रीय चैनलों पर इनके प्रसारण का निश्चय किया। 30—31 अगस्त 2005 को काठमांडू में हुई पांचवीं बैठक में निजी टीवी और रेडियो चैनलों के लिए नियामक फ्रेमवर्क बनाने पर सहमति हुई। साथ ही सभी सदस्य देशों में बनी फिल्मों, टीवी फिल्मों और वृत्तचित्रों के

समारोह करने का भी फैसला किया गया। एक लाख डॉलर से सार्क मीडिया विकास कोष की स्थापना पर भी सभी मंत्री सहमत हुए। गौरतलब है कि सार्क देशों के सूचना मंत्रियों का समूह अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर भी दक्षिण एशियाई क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है।

सार्क ऑडियो–विजुअल एक्सचेंज (सेव) – ढाका कम्यूनिके के पहले भी दक्षिण एशिया के देशों के बीच संचार में सहयोग होता रहा है और इसकी प्रमुख सूत्रधार ही सार्क ऑडियो–विजुअल एक्सचेंज (सेव) समिति। 1986 में बेंगलूरु में हुए दूसरे सार्क शिखर सम्मेलन में क्षेत्र के लोगों के बीच संवाद बढ़ाने के लिए पांच प्रमुख उपायों पर सहमति बनी, उनमें सेव कार्यक्रम भी था। इसका उद्देश्य क्षेत्र के लोगों में एक–दूसरे के प्रति जानकारी बढ़ाना था। सार्क मंत्रिमंडल की नई दिल्ली में जून 1987 में हुई तीसरी बैठक में सदस्य देशों के बारे में सूचना के आदान–प्रदान के प्रस्ताव को मंजूर किया गया। सेव कार्यक्रमों को बनाने और लागू करने की जिम्मेदारी सेव समिति की है।

समिति की मार्च 2004 में भूटान की राजधानी थिम्फू में हुई 22वीं बैठक में रेडियो और टीवी कार्यक्रमों के प्रसारण की योजना को अंतिम रूप मिल गया। सेव कार्यक्रम हर महीने की पहली और पंद्रह तारीख को सभी सदस्य देशों में प्रसारित होते हैं। इनमें पर्यावरण, विकलांगता, युवा, साहित्य, प्रशासन में भागीदारी, सुरक्षित साफ पानी, एड्स, पर्यटन जैसे विषयों पर संयुक्त कार्यक्रम शामिल हैं। सेव के तहत अलग–अलग देशों में सालाना सार्क टीवी और रेडियो प्रश्नोत्तरी कार्यक्रम भी होते हैं। इनमें हाई स्कूल स्तर के विद्यार्थी भाग लेते हैं।

राष्ट्रीय रेडियो, टीवी के प्रमुखों की बैठक – मूलतः सेव समिति की निगरानी के लिए 1998 में सदस्य देशों के राष्ट्रीय रेडियो और टीवी संस्थानों के प्रमुखों का एक संगठन बनाया गया। धीरे–धीरे इसकी भूमिका का विस्तार हुआ। आज यह सदस्य देशों में इलेक्ट्रॉनिक मीडिया को मजबूत बनाने के नीतिगत फैसलों पर सुझाव देने जैसी गंभीर जिम्मेदारियां भी निभा रहा है। इसकी पहली सालाना बैठक नई दिल्ली में नवंबर 1999 में हुई जिसमें सेव कार्यक्रमों की गुणवत्ता में सुधार के कुछ सुझाव दिए गए। जनवरी 2003 में इस्लामाबाद में हुई बैठक में तय किया गया कि हर सप्ताह पांच से दस मिनट का रेडियो समाचार 'सार्क न्यूज' और हर माह 15 मिनट का टीवी समाचार कार्यक्रम 'सार्क राउंड–अप' तत्काल ही शुरू किया जाए। बाद की बैठकों में भी मीडिया के क्षेत्र में आपसी सहयोग बढ़ाने और सूचना के बेरोक प्रवाह को सुनिश्चित करने के लिए कार्य योजना लागू करने पर जोर दिया गया। इसके अन्य कार्यक्रमों में बाल फिल्म समारोह, सार्क क्षेत्र के संगीत का अभिलेखन (आर्काइव), सभी सदस्य देशों की राष्ट्रीय भाषाओं में वीडियो डॉक्युमेंट्री 'नई सदी में सार्क' (सार्क इन द न्यू मिलेनियम) का निर्माण, सदस्य देशों के रेडियो व टीवी चैनलों का डिजिटलाइजेशन आदि शामिल हैं।

संपादकों और पत्रकारों की बैठक – सार्क मीडिया कार्ययोजना का एक और महत्वपूर्ण हिस्सा है– सदस्य देशों के मीडिया प्रमुखों और पत्रकारों की सालाना बैठक। इसका मुख्य उद्देश्य सदस्य देशों के बीच सूचना के अबाध आदान–प्रदान की प्रणाली को मजबूत बनाना और साथ ही पत्रकारों को प्रशिक्षण के लिए मंच उपलब्ध कराना और उनके लिए सार्क देशों में वीसा नियमों को सरल बनाना है। इन्हीं उद्देश्यों के मद्देनजर सार्क देशों के पत्रकारों की पहली बैठक 1–2 नवंबर 2003 को ढाका में हुई। इसमें उपरोक्त मुद्दों के साथ ही पत्रकारों के कल्याण के लिए सार्क मीडिया विकास कोष बनाने का प्रस्ताव भी पारित किया गया। अक्टूबर 2004 में नई दिल्ली में संपादकों और पत्रकारों के दूसरे सम्मेलन में पत्रकारों को एक–दूसरे के देशों में जाने में आसानी के लिए वीसा नियम सरल बनाने पर आम सहमति बनी। साथ ही छपाई मशीन, न्यूजप्रिंट और अन्य मीडिया संबंधी उपकरणों और उत्पादों के आयात पर शुल्क में कटौती का मुद्दा भी जोर–शोर से उठा। अखबारों–पत्रिकाओं में एक–दूसरे के देशों की विकास की खबरों को निश्चित जगह देने और सार्क मीडिया प्रशिक्षण अकादमी बनाने पर भी आम सहमति बनी। इसमें गरीबी और दूसरी सामाजिक बुराइयों को दूर करने में मीडिया की सक्रियता पर भी चर्चा हुई।

फरवरी 2007 में नई दिल्ली में हुए सार्क पत्रकारों के सम्मेलन में एक मुद्दा गंभीरता से उभर कर आया कि अब मीडियाकर्मी दक्षिण एशिया क्षेत्र के मुद्दों पर बहुत कम लिख रहे हैं। साथ ही वे गंभीर, वास्तविक विषयों की बजाए सनसनीखेज़, क्षणिक मुद्दों को ज्यादा तवज्जो दे रहे हैं। दूसरी ओर भागीदारों ने यह भी महसूस किया कि मीडिया अब जटिल और संवदेनशील समझे जाने वाले मुद्दों पर भी अपनी स्वतंत्र आवाज उठा पा रहा है। उन्होंने माना कि सभी देशों के पत्रकारों को जुड़ने, मिलकर काम करने की ज्यादा जरूरत है। सम्मेलन में आर्थिक और राजनीतिक सहयोग बढ़ाने में मीडिया की भूमिका को भी रेखांकित किया गया।

विभिन्न सूचना संस्थान – इसके अलावा सूचना की साझेदारी से संबंधित गतिविधियों में नई दिल्ली में सार्क डॉक्युमेंटेशन सेंटर और काठमांडू, नेपाल में सार्क सूचना केंद्र की स्थापना शामिल है।

ढाका में सार्क देशों के सूचना मंत्रियों की 1998 में हुई पहली बैठक में ही सार्क सूचना केंद्र बनाने पर सहमति हो चुकी थी लेकिन इसे कार्यरूप देने में कुछ समय लग गया। यह केंद्र सार्क संगठन और सदस्य देशों से सूचनाएं एकत्र करने, मीडिया के लिए सहयोग और समन्वय, अनुसंधान और प्रशिक्षण सुविधाएं जुटाने के अलावा सूचना बैंक, सार्क ऑडिओ–विजुअल आदान–प्रदान (सेव) समन्वय तथा सार्क क्षेत्रीय केंद्रों में समन्वय की जिम्मेदारियां भी पूरी तत्परता से निभाता है।

लाहौर, पाकिस्तान में 2007 में दक्षिण एशिया मीडिया केंद्र स्थापित किया गया है। इसमें कई मीडिया संगठन होंगे। यह सात अंतर्संबंधित मीडिया संस्थानों का मुख्यालय भी है। ये हैं–दक्षिण एशिया मीडिया स्कूल, दक्षिण एशिया मीडिया नेट (दक्षिण एशियाई अख़बारों की वेबसाइट), दक्षिण एशिया पत्रिका, दक्षिण एशियाई नीति विश्लेषण संगठन, दक्षिण एशिया मीडिया आयोग, दक्षिण एशिया फ्री मीडिया एसोसिएशन (साफमा) और फिल्म तथा मीडिया क्लब। केंद्र के मीडिया स्कूल में पत्रकारिता प्रशिक्षण कार्यक्रम चल रहे हैं।

दक्षिण एशिया फ्री मीडिया एसोसिएशन (साफमा)–साफमा दक्षिण एशिया में शांति स्थापना में सहयोग की मुख्य भूमिका में लगातार रहा है। सदस्य देशों के बीच आपसी विश्वास, संपर्क और संवाद बढ़ाने और सामाजिक विकास के लिए काम कर रहे संगठनों को जोड़ने में साफमा सक्रिय है। पांच देशों में इसके राष्ट्रीय अध्याय हैं। साथ ही यह विविध सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक क्षेत्रों में काम कर रहे पत्रकारों को सहकारिता के लिए मंच प्रदान करता है। क्षेत्र की मुख्यधारा की पत्रकारिता की प्रतिनिधि संस्था होने के नाते साफमा ने फरवरी 2005 में नेपाल में लगाए गए आपातकाल के दौरान वहां प्रेस की आजादी, बोलने की आजादी, सूचना के अधिकार, मानवाधिकार जैसे मसलों पर लगातार पैनी नजर रखी और विभिन्न संबंधित पक्षों से बात कर एक रिपोर्ट भी तैयार की। गौरतलब है कि नेपाल में लोकतांत्रिक बदलाव की दिशा में मीडिया ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसी तरह नवबंर 2007 में पाकिस्तान में आपातकाल के दौरान प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों पर सरकार द्वारा पाबंदियां लगाए जाने का साफमा ने कड़ा विरोध किया।

अप्रैल 2007 में नई दिल्ली में हुई साफमा की बैठक में सदस्यों ने मांगों की एक सूची बनाई जिन्हें नई दिल्ली घोषणापत्र नाम दिया गया। दरअसल पत्रकारों की ओर से ये मांगें लंबे समय से उठ रही हैं। इनमें हर देश की मुख्यधारा के 50 पत्रकारों को इस क्षेत्र में मुफ्त यात्रा के लिए सरकारों की अनुमति और भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश के छह–छह पत्रकारों को हर सदस्य देशों में नियमित रूप से रिपोर्टिंग के लिए जाने की अनुमति शामिल है। भारत और श्रीलंका जैसे कुछ देशों ने साफमा के सदस्य पत्रकारों के लिए वीसा नियम सरल किए हैं।

सूचना और संचार के क्षेत्र में सहयोग और समन्वय की अपनी यात्रा को जारी रखते हुए सार्क आज इस पड़ाव पर पहुंच चुका है कि एक पूरा साल वह मीडिया को समर्पित कर दे। सन् 2006 में ढाका में हुई मंत्रिमंडलीय बैठक में तय किया गया कि वर्ष 2008 को सार्क मीडिया वर्ष के रूप में मनाया जाए। आज मीडिया के क्षेत्र में इंटरनेट की चुनौतियां, मीडिया की जवाबदेही और सामाजिक जिम्मेदारी, मार्केट के रूबरू मीडिया, विदेश नीति और मीडिया जैसे नए सवाल उभर रहे हैं। इन सब पर गहन विचार–विमर्श के साथ ही मूलभूत मीडिया मूल्यों तथा आपसी समझ बढ़ने की दिशा में भी सोचने की जरूरत है।

(लेखिका भारतीय सूचना सेवा में अधिकारी हैं और लंबे समय से विभिन्न प्रतिष्ठित पत्र–पत्रिकाओं में विज्ञान और सामाजिक विषयों पर स्वतंत्र लेखन कार्य कर रही हैं।)

ई–मेल : ranuradha11@gmail.com

कृषि भूमि के लिए सिंचाई सुविधाएं

कृषि मंत्रालय के भूमि उपयोग संबंधी आंकड़ों के अनुसार, 2005–06 के दौरान निवल बुवाई किया गया क्षेत्र 141.9 मिलियन हैक्टेयर था जिसमें से सिंचित क्षेत्र 60.2 मिलियन हैक्टेयर था।

विभिन्न राज्य सरकारों, से प्राप्त रिपोर्टों के अनुसार, मार्च, 2007 तक 102.7 मिलियन हैक्टेयर की सिंचाई क्षमता के साथ सिंचाई संबंधित सुविधाएं सृजित की गयी हैं, जिसमें एक ही भूमि पर एक वर्ष में एक से अधिक बार सिंचाई करना भी शामिल है। सृजित सिंचाई क्षमता मं वृहद और मध्यम सिंचाई परियोजनाओं द्वारा 42.3 मिलियन हैक्टेयर, लघु सिंचाई सतही जल स्कीमों द्वारा 14.3 मिलियन हैक्टेयर और लघु सिंचाई भूजल स्कीमों द्वारा 46.1 मिलियन हैक्टेयर की सिंचाई क्षमता शामिल है। ग्यारहवीं योजना के दौरान (2007–12), 16 मिलियन हैक्टेयर की सिंचाई क्षमता का सृजन परिकल्पित है। (पसूका)

UPSC - 07 में अभूतपूर्व सफलता!

लोक प्रशासन
(हिन्दी माध्यम)

By **Atul Lohiya**

(A person who believes in scientific approach and hard work)

UGC-NET
QUALIFIED IN TWO SUBJECTS
(HISTORY & PUB. ADMINISTRATION)

लोक प्रशासन विषय से हिन्दी माध्यम में सर्वोच्च स्थान

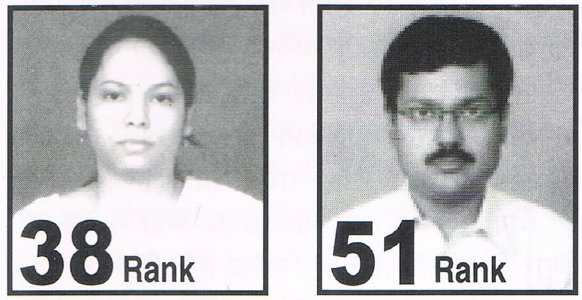

Shikha Rajput — Giriwar Dayal Singh

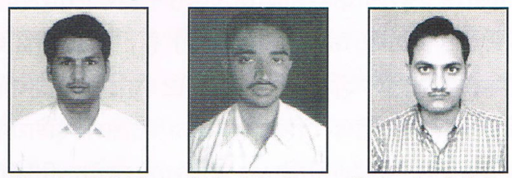

Virendra K. Patel 254 Rank — Mukesh B. Singh 465 Rank — Shailendra S. Rathour 615 Rank

छत्तीसगढ़ पी.एस.सी. में 15 वीं रैंक पर हमारे संस्थान के दृष्टिहीन छात्र आशीष सिंह ठाकुर

MPPSC-05 में Top-13 में 4

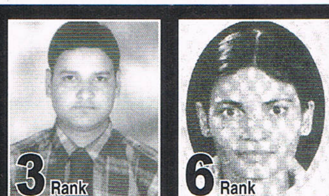

Aadesh Rai — Nimisha Jaiswal

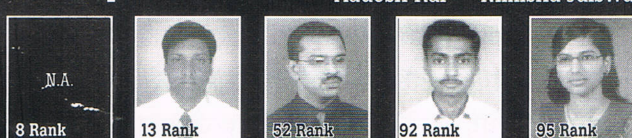

Rinkesh Kumar — Akhilesh K. Jain — Sanmati Kumar — Shashi Kant — Deepali Jain

UPSC-06 में सर्वोच्च अंक विकास कुमार-353 (184/169)

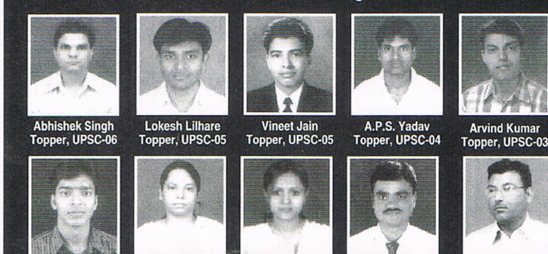

Abhishek Singh Topper, UPSC-06 — Lokesh Lilhare Topper, UPSC-05 — Vineet Jain Topper, UPSC-05 — A.P.S. Yadav Topper, UPSC-04 — Arvind Kumar Topper, UPSC-03

Tirthraj Agarwal SDM, 9th Rank, CG. — Shikha Rajput 31st Rank, CG. — Ranu Sahu (Dy. SP) 60th Rank, CG. — Ram M. Sahu 39th Rank, MP — Prakash Chandra SDM Uttaranchal-02

आप भी प्राप्त कर सकते हैं 350+ अंक, कैसे? Winning Strategy के साथ

New Batch (Delhi): 16th July '08
Admission Open from 5th July '08

New Batch (Allahabad): 19th July '08
Admission Open from 10th July '08

केवल हम कराते हैं लोक प्रशासन का सम्पूर्ण एवं समग्र अध्ययन;

* *UPSC के साथ UP, MP, Raj., Bihar, Uttaranchal, Jharkhand Chhattisgarh, Haryana, Himachal PCS की भी तैयारी;*

JOIN FOUNDATION COURSE
-: SHORT TERM COURSE :-
WRITING SKILL, ESSAY & PERSONALITY DEVELOPMENT

पत्राचार पाठ्यक्रम भी उपलब्ध
(पूर्णतः संशोधित; परिमार्जित एवं परिवर्धित कम्प्यूटराइज्ड नोट्स)
MAINS - 3000/-
MAINS + PRE. - 4000/-
डाक खर्च - 200/- अतिरिक्त
Send DD/MO in favour of 'Atul Lohiya'

लोक प्रशासन
Mains के साथ-साथ
Pre. के लिए भी बेहतर विकल्प

'अतुल लोहिया'
शिक्षक; मार्गदर्शक और मित्र भी

"PRABHA"
AN INSTITUTE OF PUBLIC ADMINISTRATION
DOUBTLESS KNOWLEDGE, DESIRELESS SERVICE. प्रभा
105, VIRAT BHAWAN (MTNL BLDG.), NEAR BATRA CINEMA, MUKHERJEE NAGAR, DELHI-110009
Phone : 27653498, 27655134, 32544250. Cell.: 9810651005 • e-mail: atulprabha@gmail.com
Branch : 305/250, COLONELGANJ, NEAR COLONELGANJ POLICE STATION, ALLAHABAD.

KH-07/08/01

ब्रोकली उत्पादन की आधुनिक तकनीक

डॉ. मदन पाल

विश्व में सब्जी उत्पादन में भारत का चीन के बाद दूसरा स्थान है। हमारे देश में लगभग 45–50 तरह की भिन्न–भिन्न प्रकार की सब्जियां उगायी जाती हैं जिनमें से कुछ को बाहर विदेशों में बेचकर विदेशी मुद्रा भी कमाई जाती है। आगे आने वाले समय में सब्जियों का उत्पादन तथा निर्यात बढ़ने की काफी संभावनायें हैं। जहां हम जानी–पहचानी काफी तरह की सब्जियां अपने देश में उगा रहे हैं, वहां अभी भी ऐसी सब्जियां हैं जो आर्थिक व पौष्टिकता की दृष्टि से बहुत महत्व रखती हैं, परन्तु बहुत कम लोग इनके बारे में जानते हैं। ब्रोकली इसी तरह की गोभी वर्ग की एक महत्वपूर्ण सब्जी है। ब्रोकली का उत्पत्ति स्थान इटली है तथा इसे इटेलियन हरी गोभी के नाम से भी जाना जाता है। हमारे देश में ब्रोकली की खेती विगत कुछ वर्षों से ही शुरू की गई है। अभी इसकी खेती मुख्यतः महानगरों तथा पर्यटक स्थलों तक ही सीमित है। पांच सितारा होटलों तथा पर्यटक स्थलों पर इस सब्जी की मांग बहुत है तथा शहरों के समीप किसान इसकी खेती करके बहुत अधिक लाभ कमा रहे हैं।

कटाई योग्य ब्रोकली का मुख्य सिरा (मेन हैड)

ब्रोकली का बाजार भाव 50–60 रुपये प्रति कि.ग्रा तक मिल जाता है। ब्रोकली अन्य गोभी वर्ग की सब्जियों की अपेक्षा अधिक पौष्टिक होती है। सारणी में ब्रोकली का तुलनात्मक आहार मूल्य दिया गया है। जिससे विदित है कि ब्रोकली में फूलगोभी, पत्तागोभी व गांठगोभी की अपेक्षा अधिक मात्रा में प्रोटीन, विटामिन्स व खनिज पदार्थ होते हैं। इसमें फूलगोभी से 130 गुणा तथा गांठगोभी से 22 गुणा विटामिन 'ए' होता है। ब्रोकली में 'सल्फोराफेन' नामक यौगिक बहुत अधिक मात्रा में पाया जाता है जो कैंसर रोगियों के लिए लाभदायक होता है तथा स्वस्थ लोगों में कैंसर होने की संभावना कम करता है। ब्रोकली हृदय रोगियों के लिए भी फायदेमंद होती है, क्योंकि इसके खाने से रक्त में सीरम कालेस्ट्रोल का स्तर घट जाता है। ब्रोकली की पौष्टिकता को देखते हुए आम लोगों में इसकी मांग दिनों–दिन बढ़ती जा रही है और आने वाले समय में इसकी खेती महानगरों के समीप व पर्यटक स्थलों तक ही सीमित न रहकर पूरे देश में होने लगेगी और किसानों के लिए इसकी खेती बहुत लाभकारी सिद्ध होगी।

जलवायु – ब्रोकली के लिए ठन्डी जलवायु की आवश्यकता होती है। देश के अधिकतर भागों में इसकी खेती रबी मौसम में की जाती है, जबकि अधिक ऊंचाई वाले पहाड़ी क्षेत्रों में इसकी खेती गर्मी के मौसम में भी की जा सकती है। ब्रोकली की अच्छी वृद्धि के लिए 10–18 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान की आवश्यकता होती है।

भूमि व खेत की तैयारी – ब्रोकली की सफल खेती के लिए अच्छी जल धारण क्षमता वाली एवं कार्बनिक पदार्थों से भरपूर दोमट व बलुई दोमट भूमि सर्वोत्तम मानी जाती है। भूमि का पी. एच. मान

ब्रोकली का तुलनात्मक आहार मूल्य

(प्रति 100 ग्रा. खाने योग्य भाग)

सब्जियां (ग्राम)	प्रोटीन (ग्राम)	कार्बोहाइड्रेटस (ग्राम)	वसा (ग्राम)	कैलोरीज (ग्राम)	कैलिशयम (ग्राम) शुष्क पदार्थ के आधार पर	विटामिन्स 'ए'	'सी'
ब्रोकली	3.3	5.5	0.2	3.7	1.29	9,000	137
फूलगोभी	2.4	4.9	0.2	31	0.35	70	75
पत्तागोभी	1.4	5.3	0.2	29	0.73	400	100
गांठगोभी	2.1	6.7	0.1	36	1.95	20	50

6.0 से 6.8 के बीच होना चाहिए। भूमि में जल निकास की उचित व्यवस्था होनी चाहिए क्योंकि खेत में पानी खड़ा रहने से पौधों की जड़ों को हानि पहुंच सकती है। फसल के लिए खेत तैयार करने के लिए पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल या हैरो से करें इसके बाद 2–3 जुताई देशी हल या कल्टी वेटर से करनी चाहिए। अन्तिम जुताई करने से पहले खेत में 10–15 टन प्रति हैक्टेयर की दर से गोबर की सड़ी–गली खाद डाल कर मिट्टी में अच्छी प्रकार मिला दें तथा पाटा लगाकर खेत को ढेले रहित व समतल बना लें।

उन्नत किस्मों का चुनाव – ब्रोकली की अच्छी पैदावार लेने के लिए बुवाई का समय व उगाये जाने वाले क्षेत्र के अनुसार सही किस्मों का चुनाव अति आवश्यक है। बीज हमेशा किसी विश्वसनीय संस्था जैसे राष्ट्रीय बीज निगम, राजकीय कृषि विभाग, कृषि विश्वविद्यालय आदि से ही खरीदें। ब्रोकली की कुछ उन्नत किस्में इस प्रकार हैः–

पूसा ब्रोकली के.टी.एस. 1 – यह किस्म भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के क्षेत्रीय केन्द्र कटराईन द्वारा विकसित की गई है। इसका सिरा (हैड) हल्के हरे रंग का, गुंथा हुआ तथा 250–400 ग्राम वजन का होता है। यह किस्म रोपाई के उपरान्त 80–90 दिन में तैयार हो जाती है तथा इसकी औसत पैदावार 120–140 क्विंटल/हैक्टेयर है।

के.टी.एस. 59 – यह किस्म भी भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के क्षेत्रीय केन्द्र कटाराईन द्वारा विकसित की गई है। इसका सिरा गुंथा हुआ, हरे रंग का होता है तथा इसकी औसत पैदावार 90–100 क्विंटल/हैक्टेयर है।

पालम समृद्धि – यह किस्म हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय पालमपुर द्वारा विकसित एवं जारी की गई है। इसका सिरा (हैड) हरा, गुंथा हुआ, पीले धब्बों तथा पत्तियों से युक्त होता है। फूल का वजन 300–400 ग्राम होता है। यह किस्म 85–95 दिन में तैयार हो जाती है तथा पैदावार 150–180 क्विंटल/हैक्टेयर तक मिल जाती है।

ग्रीन हैड – यह किस्म भी हिमाचल प्रदेश कृषि विश्वविद्यालय द्वारा विकसित की गई है।

ग्रीन स्प्राउटिंग ब्रोकली – इस किस्म का सिरा गहरे हरे रंग का गुंथा हुआ होता है। जिसका वजन 200–250 ग्राम होता है। इसके पौधे शाखायुक्त होते हैं। यह किस्म रोपाई के उपरान्त 90–100 दिन में तैयार हो जाती है तथा इसकी पैदावार 120–150 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

पंजाब ब्रोकली – यह किस्म पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, लुधियाना द्वारा तैयार की गई है। इसके पौधे शाखायुक्त, चिकनी पत्तियां तथा अत्यधिक फुटाव वाले होते हैं। सिरा मध्यम आकार, हल्की गुथी हुई हरी कलियां युक्त तथा 150–200 ग्राम वजन के होते हैं। यह किस्म रोपाई के 60–70 दिन उपरान्त तैयार हो जाती है। तथा इसकी औसत पैदावार 60–70 क्विंटल प्रति हैक्टेयर है।

इन किस्मों के अतिरिक्त कुछ विदेशी कम्पनियां भारत में अब ब्रोकली की संकर किस्मों का बीज भी बेच रही हैं। जिनमें से कुछ संकर किस्में इस प्रकार हैं– पैकमैन, कैप ओवन, बैकलस, ग्रीन लोफी, लैण्ड स्टार, ग्रीन मेल, ग्रीन डोम, शिगमरी इत्यादि।

बीज की मात्रा एवं बुवाई का समय – एक हैक्टेयर की पौध

ग्रामीण विकास मंत्रालय ने राज्यों से नरेगा-श्रमिकों का भुगतान बैंक और डाकघर खातों के जरिए सुनिश्चित करने को कहा

ग्रामीण विकास मंत्रालय ने सभी राज्यों एवं केंद्रशासित प्रदेशों को राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कानून (नरेगा) के तहत श्रमिकों को अनिवार्य रूप से बैंक/डाकघर खातों के जरिए भुगतान सुनिश्चित करने को कहा है। ग्रामीण विकास सचिव ने सभी मुख्य सचिवों का ध्यान, इस संबंध में केंद्र सरकार के मुख्य नीतिगत फैसले की ओर आकृष्ट किया है। नरेगा श्रमिकों को भुगतान के वास्ते खाते खोलने के लिए बैंकों/डाकघरों के नेटवर्क को इस्तेमाल करने तथा इन खातों के जरिए ही भुगतान करने की सलाह दी गयी है।

ग्रामीण विकास मंत्री श्री रघुवंश प्रसाद सिंह ने इस योजना में पारदर्शिता लाने के लिए नरेगा–परिवारों के वास्ते खाते खोलने के लिए सघन अभियान चलाने के लिए पहले ही मुख्यमंत्रियों को लिखा हैं। अब तक 3.42 करोड़ नरेगा–परिवारों में से 1.62 के लिए खाते खोले गये हैं।

आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, झारखंड, और केरल में इस दिशा में सराहनीय कार्य हुए है और इस तरह के सभी परिवारों के लिए खाते खोले गये हैं तथा खातों के जरिए ही उन्हें भुगतान किये जा रहे हैं। हिमाचल प्रदेश, उड़ीसा, महाराष्ट्र और जम्मू एवं कश्मीर ने भी उल्लेखनीय कदम उठाये हैं।

हालांकि मंत्रालय ने बिहार, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, असम, छत्तीसगढ़ पश्चिम बंगाल, तमिलनाडु, और पूर्वोत्तर राज्यों में खाते खोलने की धीमी गति पर चिंता प्रकट की। इन राज्यों से यथाशीघ्र ठोस कदम उठाने की सलाह दी गयी है। (पसूका)

तैयार करने के लिए लगभग 300 से 400 ग्राम बीज की आवश्यकता होती है। नर्सरी में बीज की बुवाई उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में सितम्बर–अक्टूबर में की जाती है। पहाड़ी क्षेत्रों में बुवाई जुलाई–अगस्त में जबकि अधिक ऊंचाई वाले पहाड़ी क्षेत्रों में बीज की बुवाई मार्च–अप्रैल में की जाती है।

नर्सरी तैयार करने का ढंग – ब्रोकली की सफल खेती के लिए स्वस्थ बीज एवं स्वस्थ निरोग नर्सरी का होना अत्यन्त आवश्यक है। नर्सरी तैयार करने के लिए स्थान का चुनाव करते समय कुछ विशेष बातों का ध्यान रखना चाहिए जैसेः– नर्सरी खेत के किनारे पर लगानी चाहिए जहां धूप लगती हो, पेड़ों की छाया न हो, सिंचाई की उचित व्यवस्था हो, मिट्टी में कंकड़–पत्थर न हों। नर्सरी ऊंचे स्थान पर हो जहां पर पानी का जमाव बिल्कुल न हो। प्रत्येक वर्ष नर्सरी नई जगह पर उगानी चाहिए जिससे कीटाणु एवं रोगजनक की संख्या अधिक न होने पाये।

नर्सरी वाले खेत की अच्छी प्रकार से जुताई करके 3 मी. लम्बी, 0.75 मी. चौडी और 0.15 मी. ऊंची उठी हुई क्यारियां बना ली जाती हैं। क्यारियों की लम्बाई आवश्यकतानुसार व भूमि की उपलब्धतानुसार बढ़ाई जा सकती है किन्तु चौड़ाई और ऊंचाई इतनी ही रखनी चाहिए। दो क्यारियों के बीच में 30–45 सेमी. का अन्तर रखें ताकि फालतू पानी का निकास हो सके तथा क्यारियों की निराई–गुड़ाई करने में सुविधा हो। प्रत्येक क्यारी में 20–25 कि.ग्रा. भली भांति सड़ी हुई गोबर की खाद डालकर, उसे मिट्टी में अच्छी प्रकार मिला दें, इसके अतिरिक्त 200 ग्राम, सिंगल सुपर फास्फेट, 50 ग्रा. यूरिया तथा 50 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति क्यारी की दर से मिट्टी में मिला दें। क्यारियों में बीज की बुवाई करने से पहले क्यारियों की भूमि का रोगाणु रहित करना अति आवश्यक है, इसके लिए थीरम/कैप्टान नामक कवकनाशी की 2 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर बुवाई से 1–2 दिन पूर्व भूमि को उपचारित करना चाहिए। उपचारित क्यारियों में 10 सेंमी. की दूरी पर 1–1.5 सेमी. गहरी लाइनें बना लेते हैं। इन लाइनों में बीज की बुवाई लगभग 5 सेमी की दूरी पर की जाती है।

बुवाई के पश्चात् इन लाइनों को सड़ी हुई बारीक गोबर की खाद से ढक कर सूखी घास या सूखी पत्तियों को क्यारियों के ऊपर बिछा देना चाहिए। ढकने के पश्चात् क्यारियों की फव्वारे से हल्की सिंचाई कर दें। अंकुरण होने पर घास या पत्तियों को हटा दें। नर्सरी में जैसे ही खरपतवार दिखाई दें उन्हें हाथ या खुर्पी से निकाल दें तथा समय–समय पर आवश्यकतानुसार हल्की, सिंचाई करते रहें। इस प्रकार बीज बोने के लगभग 4–5 सप्ताह में ब्रोकली की पौध खेत में रोपाई करने योग्य हो जाती है।

रोपाई – उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में पौध की रोपाई अक्टूबर के प्रथम सप्ताह से नवम्बर के प्रथम सप्ताह, पहाड़ी क्षेत्रों में अगस्त के अन्तिम सप्ताह से मध्य अक्टूबर तथा अधिक ऊंचाई वाले पहाड़ी क्षेत्रों में मई में की जाती है। नर्सरी में जब पौधे 10–12 सेंमी. या 4–5 सप्ताह के हो जाएं तो उनकी खेत में रोपाई कर देनी चाहिए। ब्रोकली की रोपाई पंक्तियों में की जाती है। किस्मों के अनुसार पंक्ति से पंक्ति की दूरी 45–60 सेंमी. तथा पंक्ति में पौधे से पौधे के बीच का अंतर 40 सेंमी. रखते हैं। पौध 3–4 सेंमी. से अधिक गहरी नहीं लगानी चाहिए। खेत में नमी होनी चाहिए तथा पौध की रोपाई के बाद हल्की सिंचाई अवश्य कर दें। पौध की रोपाई दोपहर बाद अथवा शाम के समय ही करें।

खाद एवं उर्वरक प्रबन्ध – हमारे देश में ब्रोकली की खेती अभी तक बड़े पैमाने पर नहीं की जाती है, अतः फसल की खाद एवं उर्वरक सम्बन्धी आवश्यकताओं पर शोध कार्य कम ही हुआ है। सामान्यतः ब्रोकली की अच्छी पैदावार लेने के लिए 10–15 टन गोबर की सड़ी गली खाद रोपाई से 20–25 दिन पहले खेत में समान रूप से बिखेर कर मिट्टी में अच्छी तरह मिला देना चाहिए। इसके साथ–साथ 100–125 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60–80 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 50–60 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टेयर की दर से देने की सिफारिश की जाती है। फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा तथा नाइट्रोजन की एक–तिहाई मात्रा रोपाई करने से पहले खेत में समान रूप से डालकर मिट्टी में मिला देनी चाहिए। नाइट्रोजन की बाकी बची हुई दो–तिहाई मात्रा पौध रोपाई के 25 और 50 दिन बाद बराबर हिस्सों में बांटकर खड़ी फसल में समान रूप से छिड़क दें। नाइट्रोजन डालने के बाद खेत में सिंचाई अवश्य कर दें। डॉ. वाई.एस. परमार उद्यान एवं वानिकी विश्वविद्यालय सोलन, हिमाचल प्रदेश में ब्रोकली की फसल पर किये गये उर्वरक संबंधी परीक्षण

वैज्ञानिक एवं नवीनतम तकनीक द्वारा उगायी गई ब्रोकली

में ब्रोकली की अधिकतम पैदावार (153 क्विंटल/हैक्टेयर) 120 कि. ग्रा. नाइट्रोजन व 60 कि.ग्रा. फास्फोरस प्रति हैक्टेयर देने से प्राप्त हुई। ब्रोकली में मुख्य पोषक तत्वों (नाइट्रोजन, फास्फोरस तथा पोटाश) के अतिरिक्त कुछ सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे बोरोन व मोलिब्डिनम की कमी के लक्षण भी देखे गए हैं। अतः इन सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी दूर करने के लिए रोपाई से पहले खेत की तैयारी के समय 10–15 कि.ग्रा. बोरेक्स तथा 500 ग्रा. अमोनियम मोलब्डेट का प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग करें।

जल प्रबंध – पहली हल्की सिंचाई रोपाई के तुरंत बाद करनी चाहिए। पौध की रोपाई के 6–7 दिन बाद खेत में घूम कर देख लें कि पौधे सही तरह से खड़े हो गये हैं, या मर गये हैं, यदि किसी कारणवश कुछ पौधे उखड़ गये हों या मर गये हों तो उसके स्थान पर दूसरे पौधे लगाकर (गैप फिलिंग) पौधों की संख्या पूरी कर लें। इसके बाद हल्की सिंचाई अवश्य कर दें, बाद में आवश्यकतानुसार 10–15 दिन के अन्तराल पर हल्की सिंचाई करते रहना चाहिए। इस प्रकार ब्रोकली की अच्छी पैदावार लेने के लिए 5–6 सिंचाइयां पर्याप्त होती हैं। सिंचाई के लिए फसल की प्रारंभिक वृद्धि अवस्था तथा सिरा (हैड) विकास अवस्था क्रान्तिक अवस्थाएं हैं। अतः इन अवस्थाओं पर खेत में पानी की कमी नहीं होनी चाहिए।

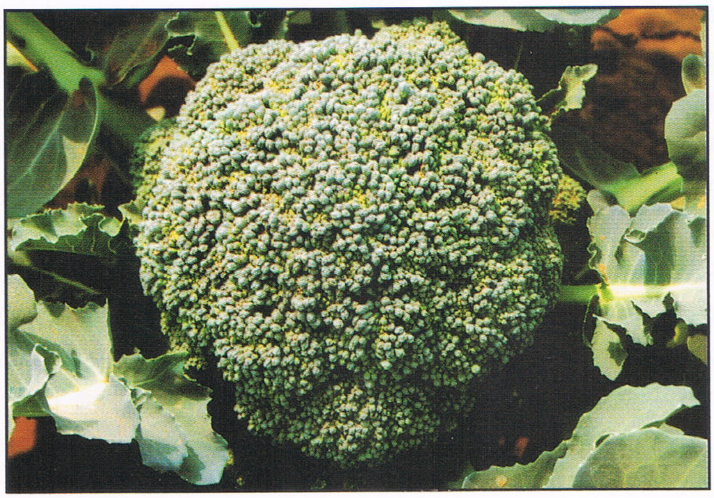

ब्रोकली का पूर्ण विकसित हैड

खरपतवार प्रबन्ध : खरपतवार फसल के साथ पोषक तत्वों, नमी, प्रकाश तथा स्थान के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं, फलस्वरूप फसल की पैदावार व गुणवत्ता में कमी आ जाती है। इसके अतिरिक्त खरपतवार फसल में लगने वाले रोगों के जीवाणुओं एवं कीट व्याधियों को भी आश्रय देते हैं। अतः ब्रोकली की अच्छी पैदावार लेने के लिए खेत को रोपाई के 25–30 दिन बाद तक खरपतवार मुक्त रखना चाहिए। खरपतवार नियंत्रण के लिए बेसालिन या ट्राईफ्लूरेलिन नामक खरपतवार नाशक की 1.0 लीटर सक्रिय तत्व की मात्रा प्रति हैक्टेयर की दर से रोपाई के पहले खेत में छिड़काव करके मिट्टी में अच्छी तरह मिला दें। इसके अतिरिक्त फसल में 2–3 उथली निराई–गुड़ाई 15 दिन के अन्तराल पर करें। निराई–गुड़ाई करने से खरपतवारों की रोकथाम के साथ–साथ भूमि में वायु संचार भी होता है। जिससे फसल वृद्धि पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। निराई–गुड़ाई करते समय ध्यान रहे कि इससे पौधों की जड़ों को हानि न पहुंचे। अंतिम निराई–गुड़ाई के बाद पौधों पर हल्की मिट्टी चढ़ा दें जिससे पौधे न गिरें।

फसल सुरक्षा : ब्रोकली के मुख्य कीट एवं बीमारियां और उनका नियंत्रण इस प्रकार है।

कीट

डायमण्ड बैक मोथ – ब्रोकली का यह बहुत हानिकारक कीट है। इसकी मादा कीट पत्तियों की निचली सतह पर अण्डे देती है। जिनसे 3–10 दिनों में सूडियां निकल आती हैं। ये सूड़ियां, पत्तियों के सम्पूर्ण हरे भाग को काटकर अत्यधिक क्षति पहुंचाती हैं जिससे पत्तियां छलनी की भांति दिखाई देने लगती हैं।

कटुआ कीट – पौध रोपण के कुछ समय बाद इस कीट की सूंडियां पौधों के मुलायम तनों को जमीन के पास से काट देती हैं जिससे पौधे सूखकर नष्ट हो जाते हैं।

तंबाकू की सूड़ी – इस कीट की सूड़ियां भी पौधे की मुलायम जड़ों व पत्तियों को काटती हैं जिससे फसल को अत्यधिक हानि होती है।

कैबेज तना छेदक – यह ब्रोकली की फसल का अत्यन्त हानिकारक कीट है। गिड़ार शुरू की अवस्था में पत्तियों को खाकर विकसित होती है जो बाद में ब्रोकली के तने के अगले भाग में प्रवेश कर मुलायम तने को गोलाई में काट देती हैं। जिससे पौधों में विकृति उत्पन्न हो जाती है और पैदावार में काफी कमी आ जाती है।

नियंत्रण

- रोपाई से पूर्व खेती की गहरी जुताई कर कुछ दिनों के लिए धूप में खुला छोड़ दें जिससे कि इन कीटों की जमीन में छिपी विभिन्न अवस्थाओं जैसे : सूंडी, प्यूपा को धूप व जैविक कारकों (परभक्षी तथा परजीवियों) को नष्ट किया जा सके।
- खेत में उगे खरपतवारों व अन्य फसलों के अवशेषों को जलाकर/भूमि में दबाकर नष्ट कर दें। जिससे कि उनमें छिपे विभिन्न कीटों के अण्डों, सूड़ियों व प्यूपा अवस्थाओं को नष्ट किया जा सके।
- कीटों के अण्डों को खड़ी फसल में पत्तियों की निचली सतह पर ध्यानपूर्वक देखें और दिखाई देने पर पत्तियों सहित काटकर मिट्टी में दबा दें।
- फसल में उपरोक्त कीटों का प्रकोप होने पर एण्डोसल्फान या क्वीनालफॉस कीटनाशी की 2 मि.ली. मात्रा प्रति लीटर पानी

की दूर से घोल बनाकर 10 दिनों के अन्तराल पर 2–3 बार छिड़काव करें।

रोग

- आद्रगलन – यह नर्सरी में उगे छोटे पौधों में होने वाला फफूंद जनित रोग है जो अधिक नमी व उच्च तापमान के कारण उत्पन्न होता है। रोग प्रभावित पौधे भूमि की सतह से सड़कर गिर जाते हैं।

नियंत्रण – नर्सरी में बीज बोने से पहले भूमि का उपचार किसी फफूंदनाशक दवा जैसे कैप्टान/थीरम से बुवाई के दो सप्ताह पूर्व करें।

- बीज को कैप्टान या बाविस्टीन से 2.5 ग्राम दवा प्रति कि.ग्रा. बीज दर से उपचारित करके बुवाई करें।
- नर्सरी की क्यारियों को खेत की सामान्य सतह से 15 से.मी. की ऊंचाई पर रखें तथा जल निकास का उचित प्रबंध रखें।
- पौधों में रोग के लक्षण दिखायी देने पर (बीज जमाव के 15–20 दिन बाद) बाविस्टीन या डायथेन एम. 45 का 2 ग्रा. प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर पौध पर छिड़काव करें।

चेंपा (माहू) – यह हरे मटमैले व छोटे आकार के कीट होते हैं जो कि पौधों की पत्तियों का रस चूस लेते हैं, जिससे पत्तियां पीली पड़कर सूख जाती हैं तथा प्रभावित पौधों की उत्पादन क्षमता कम हो जाती है। चेंपा के प्रभावी नियंत्रण के लिए मेलाथियान, या एण्डोसल्फान दवा 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर पौधों पर अच्छी प्रकार छिड़काव करना चाहिए।

काला विगलन – मौसम में अधिक आद्रता तथा अधिक तापमान होने पर यह रोग तेजी से फैलता है। रोगी पौधों की पत्तियों के किनारे पर पीले रंग के धब्बे बनने लगते हैं जो आकार में वृद्धि कर मध्यशिरा तक फैल जाते हैं। जिससे पत्तियों की शिराओं का रंग काला या भूरा हो जाता है और पत्तियां गिर जाती हैं।

नियंत्रण

● प्रमाणित बीज बोयें। ● रोग रोधी किस्में उगायें। ● बीज बोने से पहले इसे 52 डिग्री सेल्सियस तापमान पर आधे घंटे तक पानी में डालकर उपचारित करें। ● स्ट्रैप्टोसाइक्लीन का 100–200 पी.पी.एम. का घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें।

कटाई प्रबंध व उपज – फसल में जब हरे रंग की कलियों का मुख्य सिरा (मेन हैड) बनकर तैयार हो जाये तो इसे लगभग 12–15 से.मी. लंबे डंठल के साथ तेज चाकू या दराती से कटाई कर लें। मुख्य सिरा काटने के बाद पौधों के तनों से दूसरी छोटी–छोटी कलियां निकलती हैं और ये कलियां उप सिरा (सब हैड) के रूप में तैयार हो जाती हैं। इन उप सिरों को भी 8–10 से.मी. लंबे डंठल सहित उचित समय पर कलियां खिलने से पहले कटाई करें।

ध्यान रखें कि कटाई के समय सिरा (हैड) खूब गुंथा हुआ हो तथा उसमें कोई कली खिलने न पाये। ब्रोकली तैयार होने के बाद कटाई में देरी करने से वह ढीली होकर बिखर जायेगी और कली खिलकर पीला रंग दिखाने लगेंगी। ऐसी अवस्था में कटाई करने पर ब्रोकली की गुणवत्ता कम हो जाती है और इसका सही बाजार भाव नहीं मिलता।

इस प्रकार ब्रोकली की खेती यदि उपरोक्त उन्नत सस्य विधियां अपनाकर की जाये तो साधारण किस्मों से 75–100/–क्विंटल/हैक्टेयर और संकर किस्मों से 120–180 क्विंटल/हैक्टेयर तक उपज प्राप्त की जा सकती है।

(लेखक भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के सस्य विज्ञान संभाग में तकनीकी अधिकारी हैं।)

ई–मेल : madpal@iari.res.in

110 ब्लाकों में भूजल के सम्भरण के लिए 4.455 मिलियन कुएं खोदे जाएंगे

खोदे गये कुओं के जरिये भूजल के कृत्रिम संभरण योजना देश में भूजल संसाधनों के अत्यधिक शोषण की समस्याओं के साथ–साथ जल संसाधन प्रबंधन संपोषण योग्य सुनिश्चित करने के कार्यों को ध्यान में रखते हुए शुरू की गई है और प्रभावित क्षेत्रों में सिंचाई सुविधाओं को आश्वस्त किया गया है।

देश के अनेक क्षेत्र कठोर चट्टानों के नीचे सीमित भंडारण क्षमता होने के कारण भूजल संसाधनों के अति शोषण और समाप्ति की गंभीर समस्याओं का सामना कर रहे हैं। इन भूजल प्रतिबलित क्षेत्रों अर्थात अति शोषित, गंभीर और कम गंभीर क्षेत्रों का लगभग 80 प्रतिशत आंध्र प्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र राजस्थान और तमिलनाडु के राज्यों में कठोर चट्टान क्षेत्रों में स्थित है जहां दीर्घावधि आधार पर भूजल स्तर में तेजी से कमी होती देखी गयी है।

चिन्हित क्षेत्रों में अपनी कृषि संबंधी भूमि में कुआं खोदने वाला कोई भी किसान इस योजना का लाभार्थी है। योजना के तहत सीमान्त किसानों (0–1 हेक्टेयर भूमि वाले) और छोटे किसानों (1–2 हेक्टेयर भूमि वाले) को 100 प्रतिशत राजसहायता और अन्य किसानों (2 हेक्टेयर से अधिक भूमि वाले) को 50 प्रतिशत राज सहायता उपलब्ध कराई जाती है। चिन्हित राज्यों के 110 ब्लाकों में भूजल संभरण के लिए 4.455 मिलियन कुएं खोदे जायेंगे। (पसूका)

कुपोषण : कारण और बचाव

डॉ. जसवीर सिंह एवं डॉ. तेजपाल सिंह

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद खाद्य सुरक्षा भारत का सबसे बड़ा लक्ष्य रहा है और इसको प्राप्त करने में हम काफी हद तक सफल भी हुए हैं। वस्तुतः स्वतंत्र भारत की जनसंख्या जहां तीन गुणा (360 से 1081 लाख) हुई है वहीं खाद्यान्न उत्पादन चार गुणा (50 से बढ़कर 2007–08 में 209 मिलियन टन) बढ़ा है। आज दुग्ध उत्पादन (88 मिलियन टन), चाय एवं दालों के उत्पादन में भारत विश्व में सर्वोपरि है तो धान (73 मिट्रिक टन), गेहूं (70 मिट्रिक टन), मूंगफली, सरसों एवं तोरिया, गन्ना, सब्जियां (9.7 मिट्रिक टन) तथा फलोत्पादन (10.5 मिट्रिक टन) में भी दूसरे स्थान पर है। 60 लाख मछली का उत्पादन एवं 39.1 अरब अंडों का उत्पादन भी उल्लेखनीय है। आज खाद्यान्नों में हम आत्मनिर्भर हैं और देश को खाद्य सुरक्षा प्रदान करने में पूर्णतयाः सक्षम हैं। खाद्य पदार्थों के उत्पादन में इस गौरव के साथ ही यह भी सत्य है कि विगत पच्चीस वर्षों में भारत के सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में कृषि का योगदान 17 प्रतिशत घटा है (39 से घट कर 22 प्रतिशत)। कृषि कार्यों में लगे लोगों की संख्या भी 10 प्रतिशत घट कर 64 से 54 प्रतिशत रह गई है क्योंकि किसान को लगता है कि उसके परिश्रम का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। यदि विगत दशक के आंकडों पर गौर करें तो अनाजों की उत्पादिता तो अवश्य बढ़ी है किन्तु फसलों एवं पशुधन तथा प्रति व्यक्ति भोजन उत्पादन में पतन की प्रवृत्ति देखी जा सकती है।

खाद्यान्न उत्पादन की वृद्धि दर, जनसंख्या वृद्धि दर से अधिक होने के बावजूद भारत के कई राज्यों में भुखमरी एवं कुपोषण की समस्या विद्यमान है। आज भी अनेक भारतवासी भोजन के अधिकार से वंचित हैं। बड़े खेद एवं शर्म का विषय है कि कृषि प्रधान भारत देश में अभी तक सभी लोगों को ठीक से दो वक्त का भोजन उपलब्ध नहीं है। दुखद आश्चर्य की बात है कि संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम संबंधी कुल 177 देशों की मानव विकास सूची में भारत का 126वां स्थान है। संयुक्त राष्ट्र शताब्दी विकास लक्ष्यों में प्रथम है– सन् 2015 तक भुखमरी एवं गरीबी में आधी कमी करना। आज हमारे देश में लगभग 26 करोड़ लोग इससे अभिशप्त हैं। विश्व के 40 प्रतिशत सामान्य से कम वजन वाले बच्चे भारतीय हैं। पांच वर्ष से कम आयु के 75 प्रतिशत बच्चे एनीमिया अर्थात् लौह तत्व की कमी एवं 57 प्रतिशत बच्चे विटामिन 'ए' की कमी के शिकार हैं। हम सभी जानते हैं कि लौह तत्व (आयरन), हीमोग्लोबिन (रक्त के लाल रंजक) का अवयव है जो शरीर की कोशिकाओं को जीवनदायिनी ऑक्सीजन प्रदान करता है तथा विटामिन 'ए' आंखों के स्वास्थ्य और बच्चों के विकास के लिए आवश्यक होता है। गर्भवती महिलाओं को समुचित मात्रा में पोषक आहार न मिल पाने के कारण नवजात शिशु भी कुपोषण के शिकार हो जाते हैं। हमारे यहां लगभग 30 प्रतिशत नवजात शिशुओं का जन्म के समय भार 2.5 किग्रा से कम होता है और यदि सही ढंग से उनका पालन–पोषण न किया जाए तो बाद में यह अनेक प्रकार की अपंगताओं का कारण बन जाता है।

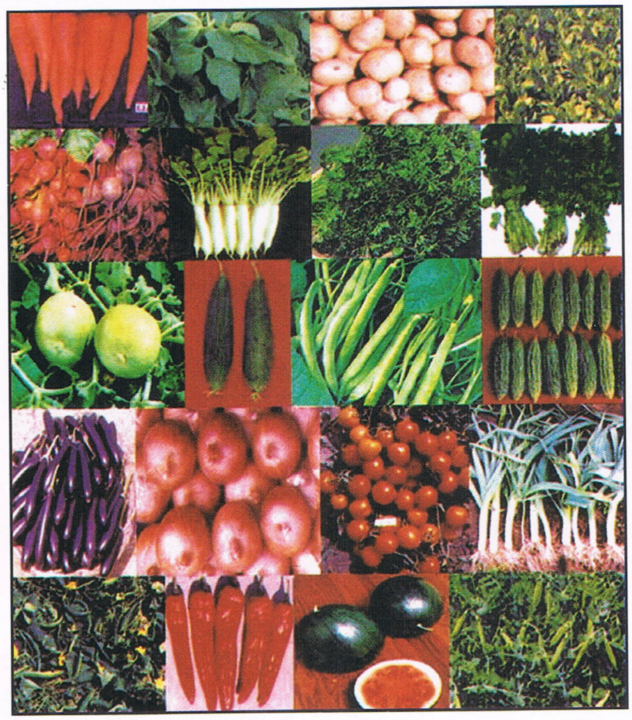

कुपोषण दूर करती हैं कच्ची और ताजा सब्जियां

विकास की आरंभिक अवस्थाओं में, यानि कि स्कूल जाने से पहले की अवस्था के बच्चों को प्रोटीन एवं अन्य पोषक तत्वों की आवश्यकता अधिक होती है और इनकी कमी से स्थायी रूप से शारीरिक एवं मानसिक क्षति पहुंच सकती है। मां के भोजन एवं जन्मोपरांत बच्चे के आहार में प्रोटीन की कमी, बच्चों में बुद्धिमत्ता की कमी होने का प्रमुख कारण पाया गया है। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, खनिज एवं विटामिन आवश्यक पोषक तत्व हैं जिनका आहार में समुचित मात्रा में समावेश अत्यावश्यक है। हमारे भोजन में इनमें से किसी एक पोषक तत्व की आवश्यकता से कम या अधिक मात्रा, कई प्रकार के रोगों को जन्म दे सकती है। प्रोटीन–ऊर्जा कुपोषण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है जो भोजन में प्रोटीन, कार्बोहाईड्रेट एवं वसा की कमी के कारण होता है। एक से पांच वर्ष की आयु के बच्चे इससे प्रभावित होते हैं। इस कारण से बच्चों का

वजन कम रहता है और वे श्वसन एवं आंत्र संबंधी रोगों के संक्रमण के प्रति अधिक सुग्राही होते हैं। 'क्वाशियोरकोर' तथा 'मारासमस' रोग, छोटे बच्चों में प्रोटीन–ऊर्जा कुपोषण के ही दुष्परिणाम है। 'क्वाशियोरकोर' एक से पांच वर्ष की आयु के बच्चों में उस समय विकसित होता है जब माताएं उन्हें अपना दूध पिलाना बंद कर देती हैं और गरीबी के कारण दूध या किसी अन्य स्रोत द्वारा भी उन्हें प्रोटीन की समुचित मात्रा प्राप्त नहीं हो पाती।

कैल्शियम और आयरन से भरपूर फल

इस रोग में बच्चा चिड़चिड़ा हो जाता है, अक्सर रोता रहता है, उसकी वृद्धि रुक जाती है, वजन कम रहता है, कोशिकाओं द्वारा पानी रोके रखने से पेट फूल जाता है तथा पैरों में सूजन हो सकती है। त्वचा गहरे रंग की और खुरदरी हो जाती है तथा बालों का रंग भी लालपन लिए हो सकता है। बच्चे का लीवर बढ़ जाता है और वह एनीमिया का शिकार हो जाता है। उसके मस्तिष्क का विकास भी अवरूद्ध हो जाता है और इस रोग से प्रभावित बच्चे प्रायः पांच वर्ष की आयु तक मर जाते हैं। बच्चों में 'मारासमस' रोग और भी अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि 'क्वाशियोरकोर' की तुलना में दुगुने बच्चे इस रोग से प्रभावित देखे गए हैं। यह एक साल से कम उम्र के बच्चों में होता है जब मां का दूध बच्चे को नहीं मिल पाता है तथा अन्य स्रोतों से भी पर्याप्त मात्रा में प्रोटीन, कार्बोहाईड्रेट और वसा नहीं मिल पाते। इससे प्रभावित बच्चा हड्डियों का ढांचा सा प्रतीत होता है।

दालों के उत्पादन में भारत का स्थान सर्वोपरि है। आहार में दालों का समुचित उपयोग कुपोषण से लड़ने में अहम् भूमिका निभा सकता है। एशिया एवं संसार के अन्य देशों की अपेक्षा भारतवर्ष में दालों का महत्व और भी अधिक बढ़ जाता है क्योंकि यहां के शाकाहार में ये आवश्यक पोषक तत्वों की आपूर्ति करती हैं।

सब्जियों के उत्पादन में विश्व में, चीन के बाद दूसरा स्थान भारत का ही है। विगत दशक (1994 से 2004) में शाक उत्पादन 50 मीट्रिक टन से बढ़कर 90 मीट्रिक टन हो चुका है। इसी प्रकार फलोत्पादन में भी उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। फल और सब्जियों को संरक्षी खाद्य पदार्थ कहा जाता है क्योंकि ये हमारे शरीर को बीमारियों से बचाते हैं। रक्त के बनने, हड्डियों एवं दांतों के लिए तथा जीवन की विभिन्न महत्वपूर्ण क्रियाओं के लिए हमारे शरीर को विटामिनों एवं खनिजों की आवश्यकता पड़ती है। विभिन्न जैविक क्रियाओं के विनियमन में भी विटामिन एवं खनिज अत्यावश्यक है यद्यपि इनकी बहुत थोड़ी मात्रा की ही आवश्यकता होती है। अधिकांश विटामिन एवं खनिज हमें फलों एवं सब्जियों द्वारा प्राप्त हो जाते हैं। इनसे प्राप्त होने वाले विटामिनों में कैरोटीन के रूप में विटामिन 'ए', 'सी' तथा 'बी' कॉम्पलेक्स ग्रुप के विटामिन, विशेषकर राइबोफ्लेविन एवं फॉलिक एसिड है। इसी प्रकार से आयरन एवं कैल्शियम जैसे महत्वपूर्ण खनिज भी हमें फल एवं सब्जियों से प्राप्त होते हैं। सभी प्रकार के फलों एवं सब्जियों से रूक्षांश (रेशे) प्राप्त होता है जो हमारी पाचन क्रिया को ठीक रखता है तथा बड़ी आंत के कैंसर की रोकथाम भी करता है। कच्ची सब्जियां, विटामिन 'सी' का बहुत अच्छा स्रोत है। इसके लिए खीरा, मूली, पत्तागोभी आदि को अपने दैनिक आहार में सलाद के रूप में सम्मिलित किया जा सकता है।

सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी, उनका कुपोषण कितना घातक हो सकता है, अग्रलिखित कुछ उदाहरणों से समझा जा सकता है। लौह तत्व (आयरन) की कमी यूं तो किसी भी व्यक्ति में हो सकती है किन्तु विशेष रूप से महिलाओं एवं बच्चों में इस तत्व की कमी अधिक देखी गई है। गर्भस्थ शिशु में आयरन की कमी होने पर बच्चे में जन्मजात अपंगता हो सकती है। वयस्कों की कार्यक्षमता एवं जननशक्ति घट जाती है। विटामिन 'ए' की कमी प्रायः बच्चों एवं गर्भवती महिलाओं में होती है जिसके कारण अंधापन हो सकता है। इसी प्रकार से जिंक की कमी भी अधिकतर बच्चों एवं महिलाओं में देखी गई है जिसके कारण बच्चों के वृद्धिकाल में संक्रामक रोग आसानी से हो जाते हैं तथा महिलाओं में गर्भावस्था के दौरान जटिल समस्याएं हो सकती है। एनीमिया, गॉयटर, रिकेट्स, ऑस्टिओमलेशिया आदि रोग, खनिजों की कमी का ही दुष्परिणाम है। इसी प्रकार से विटामिनों की कमी से रतोंधी, बेरी–बेरी, पेलेग्रा, रिकेट्स, एनीमिया एवं ऑस्टिओमलेशिया आदि रोग हो सकते हैं। पोषक तत्वों की अधिकता भी अनुचित है, मोटापा कुपोषण का ही दुष्परिणाम है।

यह आवश्यक नहीं कि महंगे फल एवं सब्जियों का प्रयोग किया जाए, अपने दैनिक आहार में मौसम के फल एवं सब्जियों को शामिल करना चाहिए और उनके पोषक तत्वों को अधिक से अधिक सुरक्षित रखना चाहिए। इसके लिए हम बहुत छोटी–छोटी बातों का ध्यान रख सकते हैं जैसे कि, जहां तक संभव हो ताजे फलों एवं सब्जियों का सेवन करना चाहिए। उन्हें ठंडे स्थान पर रखना चाहिए ताकि गर्म तापमान पर उनके विटामिन नष्ट न हों। फलों एवं सब्जियों के छिलके उतारना यदि आवश्यक है तो यथासंभव पतले उतारने चाहिए क्योंकि ज्यादातर विटामिन एवं खनिज छिलकों के ठीक नीचे स्थित होते हैं। सब्जियों को काटने के बाद धोने की बजाय, काटने से पहले अच्छी तरह धोया जा सकता है। इसी प्रकार उन्हें ढके बर्तन (कुकर आदि) में थोड़े समय में और कम से कम पानी में पकाया जाना चाहिए। अपने दैनिक जीवन में इस प्रकार की छोटी–छोटी बातों का यदि ध्यान रखा जाए तो पोषक तत्वों का ह्रास कम किया जा सकता है।

कुपोषण का सबसे प्रमुख कारण गरीबी ही है। जिस व्यक्ति की प्राथमिकता अपने परिवार के लिए दो वक्त पेट भरने की व्यवस्था करना हो, वह पोषण–कुपोषण के बारे में कहां से सोचेगा। दूसरा कारण है खाद्य पदार्थों का गलत चयन, जिससे पोषक तत्वों की आपूर्ति कम हो सकती है। आम धारणा है कि महंगे सेब या अंगूर अधिक पौष्टिक हैं जबकि इनसे कहीं सस्ता पालक या केला, वस्तुतः अधिक मात्रा में पोषक तत्व प्रदान करता है। खाद्य पदार्थों के प्रसंस्करण की आधुनिक विधियां भी पोषक तत्वों के ह्रास का एक कारण है। चावल, गेहूं आदि अनाजों की ऊपरी परत में स्थित बहुमूल्य विटामिन एवं खनिज उनको पॉलिश करने अथवा बारीकी से छानने से व्यर्थ चले जाते हैं। खाद्य पदार्थों को पानी में भिगोकर रखने और लंबे समय तक धोने से भी पोषक तत्वों का ह्रास होता है। खाना पकाने की गलत विधियां, कटे फल एवं सब्जियों को हवा में देर तक रखना, मोटा छिलका उतारना आदि भी पोषक तत्वों का नुकसान करते हैं। इसके अतिरिक्त स्थान विशेष से जुड़े कुछ कारक भी कुपोषण के लिए उत्तरदायी हो सकते हैं जैसे कि पर्वतीय क्षेत्रों की जमीन में आयोडीन की कमी होना। स्थानीय कारणों से गॉयटर एवं बेरी–बेरी जैसे रोग हो सकते हैं।

सूक्ष्म पोषक तत्वों के कुपोषण को दूर करने में 'जीन हेर–फेर' द्वारा खाद्यान्नों में पोषक तत्वों का घनत्व बढ़ाने की भी अहम् भूमिका हो सकती है।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के अलावा माननीय उच्चतम न्यायालय ने भी कई बार 'भोजन के अधिकार' के विषय में अंतरिम आदेश जारी किए हैं। अब समय आ गया है कि भारत सरकार को इस दिशा में आवश्यक कदम उठाने चाहिए। यदि हमें स्वस्थ एवं विश्व के सिरमौर भारत का निर्माण करना है तो कुपोषण को यहां से विदा करना ही होगा।

(लेखक भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के पादप रोग विज्ञान संभाग में तकनीकी अधिकारी हैं।)

ई–मेल : jasvir_iari@yahoo.com

समुद्र तल में बढ़ोतरी

संरक्षित जलवायु परिवर्तन के कारण बढ़ रहे समुद्र तल की स्थितियों का सरकार को पता है। भारतीय तट के साथ मध्य समुद्र तल पर पूर्व प्रेक्षण लगभग 1.0 मिलीमीटर (एमएम) प्रतिवर्ष की दीर्घावधि बढ़ोतरी की प्रवृत्ति को दर्शाता है। वर्तमान आंकड़े भारतीय तटपंक्ति सहित समुद्र तल में 2.5 मिमी. प्रति वर्ष की बढ़ोतरी की प्रवृत्ति जाहिर करते हैं। प्रतिरूप अनुरूपण अध्ययन संकेत करते हैं कि भारतीय उपमहाद्वीप से लगे हुए समुद्री क्षेत्र के इस शताब्दी के मध्य तक लगभग 1.5–2 डिग्री सेल्सिमय और शताब्दी के अंत तक लगभग 2.3–3.5 डिग्री सेल्सियस तक इसकी सतह के गर्म हो जाने की संभावना है। समुद्रतल की बढ़ोतरी से संबंधित तद्नुसार थर्मल विस्तार इस शताब्दी के मध्य तक 15 सेमी और 38 सेमी. के बीच और शताब्दी के अंत तक 46 सेमी. और 59 सेमी. के बीच होना अपेक्षित है।

मई, 2007 में, सरकार ने जलवायु परिवर्तन के प्रभावों पर विशेषज्ञ समिति गठित की। समिति का संदर्भ कार्य मानवीय जलवायु परिवर्तन के प्रभावों का अध्ययन और इससे संबंधित किसी अन्य मामले का अध्ययन करना है। समिति की तीन बैठकें आयोजित की जा चुकी हैं।

राष्ट्रीय स्तर पर जलवायु परिवर्तन से संबंधित मुद्दों का एक समन्वित जवाब तैयार करने के लिए जलवायु परिवर्तन के निर्धारण, अनुकूलन और न्यूनीकरण के लिए और जलवायु परिवर्तन के निर्धारण, अनुकूलन और न्यूनीकरण के क्षेत्रों में कार्य योजना के प्रतिपादन का निरीक्षण उपलब्ध कराने के लिए राष्ट्रीय कारवाई का समन्वय करने के लिए 6 जून, 2007 को जलवायु परिवर्तन संबंधी प्रधानमंत्री परिषद स्थापित की गयी थी। परिषद ने जलवायु परिवर्तन पर राष्ट्रीय कार्य योजना तैयार करने के साथ–साथ जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों का सामना करने का निश्चय किया है। (पसूका)

रेगिस्तान को नखलिस्तान बना रहे हैं-जयसिंह भाटी

(सफलता की कहानी)

वीरेन्द्र परिहार

जिस जमीन पर ठीक से बाजरा उगाने के लिए भी खासी मशक्कत करनी पड़ती हो, उस पर अपने जीवट, दृढ़ निश्चय और अटूट मेहनत के दम पर बाड़मेर जिले के एक युवा उत्साही किसान जयसिंह भाटी ने विभिन्न प्रकार के फलदार और फूलदार पौधे लगाकर, इस रेगिस्तानी जिले में एक अनूठी मिसाल कायम की है। राजस्थान के बाड़मेर जिले में वार्षिक वर्षा का औसत बहुत कम है, जहां अच्छी खेती करना एक दुष्कर कार्य सा लगता है। इस मरुस्थलीय जिले में दो वर्ष पूर्व आई भीषण बाढ़ से अभी भी लोग सहमे हुए हैं। फिर भी वहां के किसानों की मेहनत, जीवट और धैर्य का क्या कहना।

बाड़मेर जिले की शिव तहसील के उण्डू गांव में जन्मे चालीस वर्षीय जयसिंह को खेतीबाड़ी विरासत में मिली। जयसिंह प्रारम्भ से ही परम्परागत खेती के रूप में गेहूं, जीरा, सरसों, और बाजरा की खेती करते आ रहे थे। धीरे–धीरे परम्परागत खेती घाटे का सौदा साबित होने पर इनका इससे मोह भंग हो गया।

रेगिस्तान में अपनी सरसों को निहारते हुए जयसिंह भाटी

धीरे–धीरे जयसिंह स्थानीय कृषि अधिकारियों के सम्पर्क में आए, जिससे वो फलदार पौधों की खेती के प्रति आकृष्ट हुए। बाड़मेर जिला मुख्यालय से करीब चालीस किलोमीटर दूर स्थित उण्डू गांव में जयसिंह ने वह कर दिखाया, जिसकी वहां आम आदमी के लिए कल्पना करना भी मुश्किल है। कृषि क्षेत्र में कुछ खास कर गुजरने का जज्बा इनमें बचपन से ही था। इसी कारण ये सरकारी नौकरी के प्रति प्रेरित नहीं हो पाए। अपने सपने को साकार करने के लिए इन्होंने लगभग पैंसठ हैक्टेयर सिंचित – भूमि में बागवानी करने का निश्चय किया। बाड़मेर जिले के साथ ही इस मरुस्थलीय क्षेत्र में मुख्य रूप से बाजरा, मूंग, मोठ, और अरण्डी की पैदावार बहुतायत से ली जाती है। जयसिंह ने भी गत वर्ष जीरा, बाजरा और अरण्डी की बम्पर पैदावार प्राप्त की, जिससे इनकी आमदनी में अप्रत्याशित बढ़ोतरी हुई।

जयसिंह ने बाजरा की एनबीएच 5 और एनबीएच 7 नामक किस्म लगाकर इसकी बम्पर पैदावार प्राप्त की। जयसिंह के खेतों में लगी जीरे की फसल की खुशबू काफी दूर से महसूस की जा सकती है। जयसिंह के खेत का जीरा न केवल जिले में वरन् जिले से बाहर भी बिकने जाता है।

जयसिंह परम्परागत खेती में सदा से ही जैविक खेती को अपनाते आए हैं और जैविक खेती को ही अपना आदर्श मानते हैं। जयसिंह ने गत वर्ष जीरे की प्रसिद्ध किस्म आर 2–19 का प्रयोग कर जीरे की सफलतापूर्वक बम्पर पैदावार प्राप्त की। इसी कारण धीरे–धीरे जयसिंह जिले भर में जयसिंह जीरे वाले के रूप में प्रसिद्ध हो गए।

जब जयसिंह ने रेगिस्तानी जमीन पर नवीन तकनीकों की मदद से बागवानी करने का मानस बनाया, तो परिवारजनों के साथ ही अन्य लोग भी इन पर हंसने लगे, जयसिंह इन हंसी उपहासों की परवाह न करते हुए दिन रात अपने लक्ष्य की प्राप्ति में लगे रहे और अंतत इसे प्राप्त कर ही लिया। सभी आशंकाओं को झुठला कर यह उपलब्धि हासिल करने पर जयसिंह फूले नहीं समा रहे हैं। जिस किसी को जयसिंह के इस मिशन के बारे में पता चला, उन्होंने इसे कल्पना से परे बताया, आखिर रेगिस्तान में नखलिस्तान कोई मामूली बात नहीं थी।

अपनी इस महत्वकांक्षी योजना को मूर्त रूप देते हुए जयसिंह ने अपने खेत पर चार ट्यूबवैल खुदवाए और प्रत्येक पर 30 एचपी का सवमर्सिबल पम्प सैट भी लगाया। जयसिंह ने

अपनी कुशल रणनीति के तहत बाड़मेर जैसे विषम भौगोलिक परिस्थितियों वाले जिले में असिंचित भूमि को सिंचित भूमि में परिवर्तित कर अच्छा उत्पादन प्राप्त करते हुए एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया। पानी की भारी कमी वाले इस जिले में फव्वारा सिंचाई व बूंद बूंद सिंचाई (ड्रीप इरिगेशन) एक वरदान के रूप में सिद्ध हो रही है। जयसिंह ने अपने इस बगीचे को विकसित करने के लिए बीस फव्वारे लगाए, जिसकी सहायता से बगीचे की सिंचाई की जा रही है। देखते ही देखते जयसिंह का सपना साकार होने की राह शुरू हो गई। रेगिस्तानी भूमि पर बूंद बूंद सिंचाई से बागवानी करना लोहे के चने दांतों तले चबाने जैसी बात थी।

जयसिंह की मेहनत और धैर्य का परिणाम तब सामने आया, जब इस रेगिस्तानी भूमि पर झाड़ – झंकाड़ो के बीच करीब एक हजार पेड़ पौधे शान से सिर उठाये दिखाई देने लगे। आंवले, नारियल, बेर, नींबू, करोंदे, और गूंदे से लदे ये पेड़ ऐसे प्रतीत हो रहे हैं, जैसे किसान की खून पसीने की गवाही दे रहे हैं। रेगिस्तानी भूमि व वातावरण में ऐसे फलदार पौधों का पनपना किसी अचम्भे से कम नहीं था। उत्साही किसान शीघ्र ही अपने खेत पर बादाम, सीताफल, नारंगी और अमरूद बोने की तैयारी कर रहे हैं। जयसिंह ने इन फलदार पेड़ पौधों को पनपाने के लिए बकरी की गोबर खाद (मींगणियों), का इस्तेमाल किया। जयसिंह कृषि विभाग, और कृषि विज्ञान केन्द्र द्वारा समय समय पर आयोजित होने वाले प्रशिक्षणों, सेमीनारों और गोष्ठियों में भाग लेना अपना प्रमुख शौक मानते हैं। उन्नत बीज और संतुलित उवर्रकों को जयसिंह किसानों का सबसे बड़ा हथियार मानते हैं। कई बार ये पेड़ पौधे मुरझाए, लेकिन जयसिंह ने हिम्मत नहीं हारी, और वह दुबारा पौधों का रोपण करता रहा। जयसिंह द्वारा रेगिस्तान में किए गए कारनामे को अंसख्य किसान देखने आते हैं और एक अध्ययन और सीख के रूप में स्वीकार करते हैं। जलसंरक्षण करते हुए जयसिंह का सपना है कि वो औषधीय पौधों की खेती करके एक और मिसाल प्रस्तुत करें। यदि हमारे किसान भाई जयसिंह के पदचिन्हों पर चलते हुए परम्परागत खेती के साथ ही बागवानी की ओर ध्यान देते हैं, तो निश्चित ही हमारा राज्य बागवानी में अग्रणी हो पाएगा तभी दूसरी हरित क्रांति की अवधारणा को अमलीजामा पहनाया जा सकेगा।

(लेखक जयपुर दूरदर्शन के कृषि दर्शन कार्यक्रम में प्रोडक्शन सहायक हैं।)
ई–मेलः virendrapariharddk@radiffmail.com

हमारे आगामी अंक

अगस्त, 2008 – भारत निर्माण में पंचायती राज की भूमिका।
सितंबर, 2008 – ग्रामीण विकास में शिक्षा का महत्व।
अक्तूबर, 2008 – विशेषांक (विषय निर्धारित नहीं हुआ)।
नवंबर, 2008 – श्वेत क्रान्ति
दिसंबर, 2008 – भारतीय जनजातियों पर आधारित होगा ।

इसके अतिरिक्त ग्रामीण विकास, परिवहन, सड़कें, बिजली, कृषि व स्वास्थ्य से संबंधित लेख भी इनमें शामिल किए जाएंगे । उपरोक्त विषयों पर सारगर्भित लेख (आम बोलचाल की भाषा में) व फोटो हमें भेजे जा सकते हैं । पत्रिका के प्रकाशन की तिथि आगामी माह से एक माह पूर्व होती है। अतः प्रकाशन सामग्री एक माह पूर्व हमें मिल जानी चाहिए।

आवश्यक सूचना

सामाचार-पत्र वितरक कृपया ध्यान दें

एम्पलॉयमेन्ट न्यूज/रोज़गार समाचार की प्रतियों की बिक्री के लिए वितरकों के सूचीबद्धन हेतु एम्पलॉयमेन्ट न्यूज, पब्लिकेशंस डिवीजन, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली देश भर से आवेदन आमंत्रित करता है। इस संबंध में विस्तृत विज्ञापन एम्पलॉयमेन्ट न्यूज/रोज़गार समाचार के **14 जून, 2008, 28 जून, 2008 एवं 5, जुलाई, 2008** के अंकों में छापे जा रहे हैं। एम्पलॉयमेन्ट न्यूज की पहुंच बढ़ाने के लिए उन क्षेत्रों के आवेदकों को वरीयता दी जायेगी, जहां एम्पलॉयमेन्ट न्यूज का अभी तक वितरण नहीं हो रहा है। हर प्रकार से पूर्ण आवेदन अपर महानिदेशक, एम्पलॉयमेन्ट न्यूज, ईस्ट ब्लॉक–IV, लेवल–5, आर.के. पुरम, नई दिल्ली–110066 को 15 जुलाई, 2008 तक निश्चित रूप से मिल जाने चाहिएं।

अपर महानिदेशक, एम्पलॉयमेन्ट, न्यूज

Cir./EN-SP-4/08

रोज़गार समाचार

साप्ताहिक

क्या आप सरकारी/सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रम/कर्मचारी चयन आयोग/संघ लोक सेवा आयोग/ रेलवे भर्ती बोर्ड/सशस्त्र सेनाओं/बैंकों में रोज़गार तलाश रहें हैं ?

रोज़गार समाचार आपका श्रेष्ठ मार्गदर्शक है। यह विगत तीस वर्षों से नौकरियों के लिए सबसे अधिक बिकने वाला साप्ताहिक है। आप भी इसके सहभागी बनें।

आपका हमारी वेबसाइट :

employmentnews.gov.in

पर स्वागत है, जो कि

- नवीनतम प्रौद्योगिकी से विकसित है।
- उन्नत किस्म के सर्च इंजिन से युक्त है।
- आपके प्रश्नों का विशेषज्ञों द्वारा शीघ्र समाधान करती है।

रोज़गार समाचार/एम्प्लाएमेंट न्यूज की प्रति के लिए निकटतम वितरक से संपर्क करें।

व्यापार संबंधी पूछताछ के लिए संपर्क करें :

रोज़गार समाचार, पूर्वी खण्ड 4, तल 5, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली।

फोन : 26182079, 26107405, ई-मेल : enabm sa@yahoo.com

प्रकाशन विभाग

सूचना और प्रसारण मंत्रालय

भारत सरकार

Cir./EN-SP-3/08

आर. एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)-05/3164/2006-08
आई.एस.एस.एन. 0971-8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)-55/2006-08

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2006-08
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2006-08
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

प्रकाशक और मुद्रक : वीना जैन, अपर महानिदेशक (प्रभारी), प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया-II, नई दिल्ली-110 020 : संपादक : कैलाश चन्द मीना